LIBRARY

मार्च 1982

मूल्य : 1 रुपया

संपादकीय

बढ़ती गरीबी और बढ़ती अमीरी की समस्या

स्वतन्त्रता-प्राप्ति का लक्ष्य केवल इतना ही न था कि विदेशी जुए को उतार फेंका जाए। परन्तु हमारा व्यापक उद्देश्य था कि ब्रिटिश साम्राज्य के शोषण से देश में गरीबी का जो मातम छा गया है उसका अंत किया जाए। इसीलिए स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद हमारे कर्णधारों ने 'गरीबी हटाओ अभियान' का नारा लगाया। चूंकि हमारा भारत गांवों में बसता है और गरीबी का भीषण अभिशाप गांवों में ही विद्यमान है, अतः ग्रामीण विकास और गांवों की गरीबी और बेरोजगारी दूर करने के लिए सरकार ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शुरूआत की। हमारी सभी योजनाओं में ग्रामीण विकास के लिए धन राशि की व्यवस्था की गई और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन होते रहे। परन्तु इन योजनाओं के निश्चित लक्ष्यों और प्राप्त उपलब्धियों में बड़ा भारी अन्तर बना रहा। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिलसिले में निम्नतम आवश्यकता कार्यक्रम, बीस सूत्री कार्यक्रम और फिर ग्रामीण पुर्ननिर्माण मंत्रालय की ओर से 1978–79 में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम सामने आए।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत लघु कृषक विकास एजेंसी, सूखा प्रभावित कार्यक्रम, कमान क्षेत्र विकास कार्यक्रम को मिलाकर एक कर दिया गया ताकि ग्रामीण समस्याओं के समाधान के लिए संगठित प्रयास संभव हो सकें। दूसरे शब्दों में गांवों में रोजगार के अवसर बढ़ाने और गरीबों के लिए उत्पादक सम्पदा उपलब्ध कराने का प्रयास हो सके। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जिन वर्गों को शामिल किया गया है उनमें गरीबी की रेखा से नीचे वाले छोटे और सीमान्त किसान, ग्रामीण कारीगर, अनुसूचित जातियां तथा खेतिहर मजदूर शामिल हैं और यह कार्यक्रम दो हजार विकास खण्डों में लागू किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त, 600 नए विकास खण्ड भी ले लिए गए हैं और प्रतिवर्ष तीन सौ विकास खण्ड इस कार्यक्रम में शामिल किए जाएंगे। अनुमान है कि 1983 तक कुल पांच हजार विकास खण्डों में से साढ़े तीन हजार विकास खण्ड इस कार्यक्रम के अन्तर्गत आ जाएंगे।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना में इस कार्यक्रम के लिए जो राशि नियत की गई थी अब उसके लिए उससे साढ़े तीन गुना राशि नियत की गई है। हमारी प्रधानमंत्री अब इस बात पर विशेष जोर दे रही हैं कि गांव के गरीबों के उत्थान के लिए जो धन राशि नियत की जाए उसका समुचित उपयोग हो और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में जो कमियां अब तक पाई जाती रही हैं उन्हें आगे के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में दूर किया जाए। वे अनुभव करती हैं कि अब गरीबी हटाने की दिशा में सुविचारित और सुनिश्चित काम होना चाहिए। परन्तु प्रबुद्ध ग्रामीण लोगों की धारणा यह है कि योजनाभवन या ग्रामीण पुर्ननिर्माण मंत्रालय में बैठकर जो क्रांतिकारी योजनाएं और कार्यक्रम बनाए जाते हैं वे फाइलों में ही दबे रह जाते हैं और जिन कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जाता है वे चन्द दिनों में ही दम तोड़ कर रह जाते हैं। इन कार्यक्रमों के अन्तर्गत राष्ट्रीयकृत बैंकों ने जिन्हें धन दिया उनसे धन की वसूली बैंकों के लिए समस्या बन गई है। देनदार कानून के डर से भगोड़े बन गए हैं और बैंक कर्मचारी उन्हें ढूंढते फिरते हैं। यह स्थिति इसलिए है कि क्रियान्वयन स्तर पर विकास खण्ड और ग्राम स्तर पर कार्यरत एजेंसियों में कोई निकटतम सम्पर्क स्थापित नहीं है। वास्तविक जरूरत मंदों की पहचान और उनकी आवश्यकताओं के निश्चयन की प्रक्रिया दोषपूर्ण है। गरीबों के नाम पर सम्पन्न लोग लाभान्वित होते रहे हैं। हमारा विचार है कि जब तक योजना निर्माण और कार्यक्रमों के

[शेष आवरण पृष्ठ 3 पर]

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र आदि भेजिए।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), ग्रामीण पुर्ननिर्माण मन्त्रालय 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

दूरभाष : 382406

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : राधे लाल

आवरण पृष्ठ : परमार

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण पुर्ननिर्माण का प्रमुख मासिक

वर्ष 27 फाल्गुन–चैत्र 1903–1904 अंक 5

इस अंक में **पृष्ठ संख्या**

कृषि क्षेत्र की गौरवपूर्ण उपलब्धियां 2
भगवत प्रसाद चतुर्वेदी

कृषि और ग्रामीण विकास बैंक 5
रघुनाथ सिंह

सीमांत व लघु कृषकों के लिए सहारा––रेशम कीटपालन 7
ओम प्रकाश मिश्र

गोमाता जो मरते दम तक मानव जाति की सेवा करती है 9
प्रो० धीरेन्द्र दीक्षित

गांधीजी और शिक्षा 12
सुरेन्द्र अग्रवाल

शिष्टाचार ही मानवीय जीवन का मापदण्ड 15
ऋषि मोहन श्रीवास्तव

मध्य प्रदेश का ग्रामांचल––सूखे चेहरों पर रेशमी मुस्कान 16
जगमोहन लाल माथुर

हम भाषायी दासता से कब मुक्त होंगे ? 20
डा० मोती बाबू

ग्रामोत्थान के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव 22
कर्ण सिंह गौतम

आपे में आ गया (कहानी) 27
डा० शीतांशु भारद्वाज

स्थायी स्तम्भ

पहला सुख निरोगी काया : साहित्य समीक्षा : केन्द्र के समाचार : कविता आदि।

कृषि क्षेत्र की गौरवपूर्ण उपलब्धियां

* भगवत् प्रसाद चतुर्वेदी

कृषि क्षेत्र में भारत की सबसे बड़ी उपलब्धि है अनाज के मामले में आत्मनिर्भरता। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 30 करोड़ की आबादी वाले हमारे देश को भारी मात्रा में बाहर से अनाज मंगाने की आवश्यकता पड़ती थी। 1950 में गेहूं का उत्पादन करीब सवा दो करोड़ टन था। आज दुगुनी से भी अधिक आबादी को खिलाने के लिए भारत के पास पर्याप्त अन्न भंडार है। 1980-81 में गेहूं का उत्पादन 3 करोड़ 64 लाख टन से भी अधिक हुआ जबकि चावल का उत्पादन लगभग पांच करोड़ 32 लाख टन हुआ। साथ ही अन्य कृषि उत्पादों जैसे गन्ना, कपास, पटसन आदि की पैदावार में भी उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी हुई है। इस वृद्धि का सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि 1979-80 में इस सदी के भंयकरतम सूखे के बावजूद जबकि अनाज उत्पादन में करीब सवा दो करोड़ टन की गिरावट आई थी, भारत ने आत्मनिर्भरता के सिद्धांत को बरकरार रखा।

यह कोई चमत्कार वाली बात नहीं है। इस सत्र के पीछे कृषि विकास के लिए किय गये सुनियोजित प्रयास हैं, जो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही आरम्भ हो गये थे और निरन्तर जारी हैं। यहां यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि सरकारी नीति के अनुसार कृषि विकास का अर्थ खेत में उगायी फसलों की पैदावार बढ़ाने तक ही सीमित नहीं है बल्कि समूचे कृषि क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाना है जैसे दूध, मछली, मुर्गीपालन, वन सम्पदा आदि क्षेत्रों में उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ सहकारिता और विपणन क्षेत्रों का विकास करना। दूसरे शब्दों में कृषि क्षेत्र का सर्वांगीण विकास सरकार की नीतियों का लक्ष्य है।

छठी योजना में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की वार्षिक बढ़ोत्तरी दर का लक्ष्य 5.2 प्रतिशत निर्धारित किया गया है जो तभी संभव है जब कृषि क्षेत्र में 4.2 प्रतिशत वार्षिक बढ़ोत्तरी दर प्राप्त की जा सके। यह कोई मुश्किल लक्ष्य नहीं है। 1980-81 को छठी योजना का प्रारम्भिक वर्ष माना गया है। इस वर्ष में खेती की पैदावार इतनी प्राप्त हुई है कि पिछले वर्ष यानि 1979-80 में भयंकर सूखे के कारण जो नकसान हुआ था उसकी क्षतिपूर्ति हो गई। इसके लिए बहुत बड़े पैमाने पर कार्यक्रम चलाए गए जिनके अनुसार खाद, बीज, उर्वरक आदि की व्यवस्था, सिंचाई के साधन जुटाना, अनुसंधान और विस्तार कार्यों में तेजी लाना प्रमुख कार्य थे। इन प्रयासों के फलस्वरूप गेहूं की पैदावार 3 करोड़ 64 लाख टन तथा चावल की पैदावार पांच करोड़ 32 लाख टन तक मिली।

व्यावसायिक फसलों में गन्ने की पैदावार 15 करोड़ 10 लाख टन हुई तथा पटसन की 84 लाख गांठें मिलीं। यहां यह कहना असंगत न होगा कि इस वर्ष शुरू में मानसून की गति सामान्य थी किन्तु तमिलनाडु और कर्नाटक के कुछ भागों में भयंकर सूखे की स्थिति रही। उत्तर भारत में भी पंजाब, हरियाणा और राजस्थान के कुछ भागों में सूखा पड़ा और हिमाचल प्रदेश और उसके निकटवर्ती पंजाब के कुछ इलाकों में भारी वर्षा और ओलावृष्टि से फसलों को काफी नुकसान पहुंचा। इस दृष्टि से फसलों का उत्पादन और भी महत्वपूर्ण है

1980-81 में सबसे ज्यादा जोर दिया गया दालों और तिलहन के उत्पादन पर। अनाज के क्षेत्र में कोई खास वृद्धि नहीं हुई थी। किन्तु जब से पोषाहार कार्यक्रम चलाया गया और उसके अन्तर्गत लोगों को दालों के पौष्टिक गुणों की जानकारी दी गई तब से गांवों और शहरों में दालों की मांग बढ़ गई, जबकि इनकी पैदावार नहीं बढ़ी।

दालों और तिलहनों की पैदावार बढ़ाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने राज्य सरकारों के सहयोग से मिला-जुला अभियान चलाया जिसमें मुख्य रूप से तीन बातों पर जोर दिया गया। (1) मूंग, उड़द, चना और अरहर की खेती का रकबा बढ़ाया जाए, विशेष रूप से जहां सिंचाई की सुविधा हो, (2) मोटे अनाज, तिलहन कपास और गन्ने की फसलों में दालों की अंतरवर्ती फसल ली जाए (3) इनका उत्पादन बढ़ाने के लिए किसानों को सभी तकनीकी साधन जुटाए जाएं।

इसी प्रकार तिलहन वाली फसल का उत्पादन बढ़ाने के लिए सम्मिलित प्रयास किए गए हैं। तिलहनों के उत्पादन पर इसलिए भी विशेष जोर डाला जा रहा है क्योंकि इनके आयात पर भारत को काफी विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। तिलहन वाली फसलों में सोयाबीन और सूरजमुखी पर खास जोर दिया गया है। मूंगफली की पैदावार बढ़ाने के लिए भारत सरकार ने गुजरात के सौराष्ट्र इलाके में एक विशेष योजना चलाई है जिसके अन्तर्गत मूंगफली के किसानों को खरीफ मौसम में सिंचाई की विशेष सुविधाएं जुटाई जाएंगी ताकि उन्हें अनिश्चित वर्षा पर निर्भर न रहना पड़े। ध्यान रहे कि मूंगफली उत्पादन में गुजरात का अग्रणी स्थान है।

1980–81 के दौरान फसलों के उत्पादन में वृद्धि के निर्धारित लक्ष्य लगभग प्राप्त कर लिए गए थे । इसका मुख्य कारण यह था कि किसानों को फसल लेने के लिए आवश्यक सामग्री जैसे खाद, बीज, उर्वरक, दवाएं आदि समय पर उपलब्ध की गईं । किसान के हित में यह सबसे पहला कदम होता है । सरकार के इन प्रयासों का परिणाम यह हुआ कि उर्वरकों की मांग बढ़ गयी । कहना न होगा कि पैदावार बढ़ाने में उर्वरकों का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है । इस महत्व को समझते हुए सरकार ने 1980–81 में उन प्रखंडों में भी उर्वरक भेजने की व्यवस्था की जहां रेल सुविधाएं नहीं हैं।

खाद और बीज की मांग पूरी करने के लिए एक ओर जहां उर्वरकों की क्षमता का आयात बढ़ा दिया है वहां देसी कारखानों में भी उर्वरक उत्पादन की क्षमता बढ़ाई जा रही है । इसके अलावा 4 लाख गोबर गैस प्लांट और 100 सामुदायिक संयंत्र लगाने की व्यवस्था की जा रही है । इन संयंत्रों से लोगों को खाना बनाने और रोशनी के लिए गैस तथा खेतों के लिए कीमती खाद भी उपलब्ध होगी।

बीज उत्पादन का कार्यक्रम भी चल रहा है जिसके अनुसार बीजगुणन करके किसानों को वाजिब कीमत पर बढ़िया बीज उपलब्ध कराया जाता है। 1980–81 में किसानों को 25 लाख क्विंटल बढ़िया बीज दिया गया जबकि उससे पहले वर्ष केवल 14 लाख क्विंटल प्रमाणित बीज ही दिया गया था ।

भारी पैदावार देने वाली किस्मों को भारी तादाद में कीड़े भी सताते हैं । इसलिए किसान को खाद और बीज देते समय दवाओं का वितरण भी किया जाता है । रोग और कीट रोकथाम के व्यापक कार्यक्रम को पिछले वर्ष 8 करोड़ 40 लाख हेक्टेयर खेती की जमीन में अपनाया गया । छठी योजना के अन्त तक इसका लक्ष्य 10 करोड़ हेक्टेयर रखा गया है। इसके अलावा, दवाओं का छिड़काव और भुरकाव करने वाले कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि की गई है और उनके अच्छे प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है।

सिंचित क्षेत्र में वृद्धि

1980–81 के दौरान अल्प सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्र में 15 लाख हेक्टेयर की वृद्धि हुई । इस प्रकार 1980–81 के अन्त तक देश में 6 करोड़ हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि सिंचित क्षेत्र में आ चुकी है । 1981–82 के दौरान 27 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की विभिन्न सुविधायें उपलब्ध कराने का लक्ष्य है ।

1980–81 में भारत सरकार ने कृषि और सहकारिता विभाग के अन्तर्गत एक बागवानी डिविजन खोला है जिसका काम राज्य सरकारों को बागवानी विकास के लिए तकनीकी जानकारी और वित्तीय सहायता जुटाना है । इसका कार्यक्षेत्र फल, सब्जी और बागानी फसलें जैसे काजू, नारियल, मसाले आदि के बागानों और फुलवारियों तक सीमित होगा ।

बागवानी विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत फलों के बगीचे लगाने और सब्जियों की पैदावार बढ़ाने पर जोर दिया जा रहा है। भारतीय फलों की मांग विदेशों में बढ़ती जा रही है और सब्जी की खपत अपने देश में बढ़ रही है । इन योजनाओं से छोटे और सीमान्त किसानों को काफी लाभ होगा ।

विश्व बैंक की सहायता से एक बहु-राज्यीय काजुपरियोजना चलाई गई है जो केरल, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश और उड़ीसा में काजू की किस्में सुधारने और उसका उत्पादन बढ़ाने में मदद देगी । इस प्रकार नारियल के लिए एक विकास बोर्ड कोचीन में स्थापित किया गया है जो नारियल के किसानों को उत्पादन, विपणन तथा अन्य कार्यों में सलाह और सहायता देगा ।

पशुपालन

मवेशियों की नस्ल सुधारने और दूध तथा दूध से बनी चीजों का उत्पादन बढ़ाने के लिए पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक रूप देने का प्रयास किया जा रहा है । इसके अलावा गांवों में मवेशी पालन से रोजगार भी मिलेगा और समाज के पिछड़े और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों की दशा में सुधार होगा । छठी योजना में दूध उत्पादन का लक्ष्य 3 करोड़ 80 लाख टन रखा गया है । 1980–81 में दूध उत्पादन 3 करोड़ 30 लाख टन के करीब था । इस प्रकार अंडों, मांस और ऊन के उत्पादन में भी काफी बढ़ोत्तरी हुई है ।

पशुपालन विकास क्षेत्र में जिन चीजों पर जोर दिया जा रहा है, वे हैं :— संकर प्रजनन, भैंसों की चुनी हुई जातियों की नस्ल सुधारना, चरागाह विकसित करना, चारे की उन्नत किस्में प्रचलित करना, मुर्गियों की नस्लें सुधारना, देसी भेड़ों की नस्लें सुधारना आदि । इसके अलावा पशुपक्षियों में रोगों की रोकथाम के उपाय बताने के लिए समय-समय पर व्यापक अभियान चलाए जाते हैं ।

भारत सरकार प्रकृति और प्राकृतिक सम्पदा के संरक्षण को बहुत महत्व देती है। हमारी प्राकृतिक सम्पदाएं, जिनमें वन भी शामिल हैं, उजड़ती जा रही हैं जिनका प्रतिकूल असर मौसम और वातावरण पर भी पड़ रहा है । इसलिए इनका संरक्षण बहुत जरूरी है । इस संबंध में सरकार ने वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 बनाया है जिसके अनुसार वन भूमि का किसी गैर-वन्य कार्य के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाएगा ।

लोगों को लकड़ी और पशुओं को चारा उपलब्ध कराने की दृष्टि से भारी पैमाने पर वनरोपण कार्यक्रम चलाया जा रहा है । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 15.2 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में जंगल लगाए जाएंगे । गुजरात और उत्तर प्रदेश में यह कार्यक्रम पहले से ही विश्व बैंक की सहायता से चल रहा है । जन साधारण को भी इस कार्यक्रम में शामिल करने के लिए ग्रामीण इलाकों में लोगों को करीब 58 करोड़ पौधे मुफ्त दिए जाएंगे जिन्हें वह अपने घरों या खेतों के आसपास लगाएंगे । इस प्रकार लगभग 5.8 लाख हेक्टेयर में पेड़ लगाए जाएंगे ।

ऋण सुविधाएं

कृषि विकास में ऋण का बहुत महत्व है क्योंकि खेती की पैदावार बढ़ाने के के लिए आवश्यक सामग्री, विशेषकर उर्वरक पर किसान को काफी लागत

लगानी पड़ती है । इसलिए सरकार का ध्यान ऋण सुविधाएं उपलब्ध कराने की दिशा में बराबर बना रहा है । किसान को सहकारी समितियों, व्यावसायिक बैंकों और ग्रामीण बैंकों से ऋण लेने की सुविधा प्राप्त है । इन संस्थाओं को हिदायतें दी गई हैं कि किसान को आसान ब्याज दर पर बिना कठिनाई के ऋण दिए जाए ।

व्यावसायिक बैंकों को सरकारी आदेश दिए गए हैं कि वे ऋण के लिए निर्धारित राशि का 40 प्रतिशत भाग प्राथमिकता प्राप्त सैक्टरों को ऋण के रूप में दें जिनमें कृषि सैक्टर भी शामिल है । इस भाग का भी 40 प्रतिशत केवल कृषि कार्यों के लिए निर्धारित है । इस प्रकार व्यावसायिक बैंकों द्वारा कृषि क्षेत्र के लिए ऋण का स्तर कुल ऋण राशि के 16 प्रतिशत तक पहुंचाने की आशा है । इसके अलावा, सरकार ने कृषि और ग्रामीण विकास के लिए नेशनल बैंक चलाने का निर्णय किया है जो केवल ग्रामीण इलाकों के हितों की देखभाल करेगा ।

ऊपर बताए विभिन्न कृषि क्षेत्रों की उपलब्धियों पर नजर डालते समय हमें यह तथ्य नजरअंदाज नहीं करना चाहिए कि पिछले तीन वर्ष किसान के लिए घोर संकट के रहे हैं । 1979–80 में सदी का भयंकरतम सूखा पड़ा जबकि 1980–81 में कई राज्यों में सूखे की स्थिति रही । कुछ अन्य राज्यों में बाढ़ का प्रकोप रहा जिससे 54 लाख हेक्टेयर जमीन की फसलें बरबाद हो गईं । सूखे और बाढ़ के कारण उत्पादन में तो गिरावट आई ही, साथ ही राहत कार्यों पर 494 करोड़ रुपया खर्च किया गया ।

1981–82 में भी असम, उत्तर प्रदेश, बिहार और राजस्थान में बाढ़ग्रस्त इलाकों में 121.13 करोड़ रुपया खर्च किया गया । प्रकृति के प्रकोप के बावजूद केन्द्रीय सरकार के विशेषज्ञों ने सूखे और बाढ़ग्रस्त इलाकों में किसानों को वैकल्पिक फसलें लेने की सलाह दी जिससे किसानों को अपनी जमीन से थोड़ा-बहुत मुआवजा मिल ही गया । इसके अलावा, छोटे और सीमान्त किसानों को फसल लेने के लिए बीज, खाद, उर्वरक आदि कम कीमत पर उपलब्ध कराए गए ।

निरन्तर प्रगति

इस प्रकार हम देखते हैं कि कृषि विकास में उत्तरोत्तर प्रगति हुई है और कृषि उत्पादन में भी काफी वृद्धि हुई है । इसका कारण यह है कि प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में कृषि को प्राथमिकता दी गई जिसके फलस्वरूप कृषि विकास कार्यों पर हर योजना में अधिक धन की व्यवस्था की गई । छठी योजना में 13,539 करोड़ रुपये कृषि कार्यों पर खर्च करने का प्रावधान है और 15 करोड़ टन अनाज उत्पादन का लक्ष्य है । इसमें संदेह नहीं कि चालू कार्यक्रमों में किसानों का योगदान देखते हुए यह लक्ष्य प्राप्त करना कोई मुश्किल नहीं है । मौजूदा प्रगति पर हम गर्व कर सकते हैं । विश्व खाद्य संगठन में बोलते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के ये शब्द हमारे विश्वास के द्योतक हैं ।

"खाद्य फसलों की नई किस्मों, रेशे और चारे की नई फसलों, मवेशियों की नई नस्लों के विकसित करने तथा सौर उर्जा का कृषि में उपयोग करने, गोबर गैस तकनीक का कृषि कार्यों में इस्तेमाल करने जैसी अनेक बातों में भारत का अनुभव संसार के अन्य देशों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है ।"

जिन्दगी ....? एक सफर

अतीत चुका है बीत करो मत मीत सोच कुछ उसका ।
ले श्रम की पतवार लगाओ पार यार निज नौका ।
दूर क्षितिज तक दृष्टिगोचर
यदि आज है जल ।
तय कर सफर तनिक तो मांझी
दीखेगी मंजिल कल ।।

आज मनोरम मांझी मौसम उत्तम है अति मौका ।
ले श्रम की पतवार लगाओ पार यार निज नौका ।।
मंजिल कभी मिलेगी मांझी
होना नहीं अधीर ।
तूफां तो आते ही रहते हैं
लेकिन मिलते तीर ।।

बुझ न जावे दीप आशा का मीत मुसीबत बनती झौंका ।
ले श्रम की पतवार लगाओ पार यार निज नौका ।।
मायूस न हो यदि सफर बीच
खो जाए कुछ तेरा ।
नियति नट का नियम यही
जग जोगी वाला फेरा ।।

रहना तू निर्लिप्त याद रख मित्र मोह बस धोखा ।
ले श्रम की पतवार लगाओ पार यार निज नौका ।।
कस कर कर में रखना चप्पू
होगा नहीं विलम्ब ।
सागर की लहरें हैं कहतीं
यही एक अवलम्ब ।।

होगी तेरी जीत गाएजा गीत मीत मस्ती का ।
ले श्रम की पतवार लगाओ पार यार निज नौका ।।

बालासुन्दरम गिरि

कृषि और ग्रामीण विकास बैंक

रघुनाथ सिंह

संसद् का शरदकालीन सत्र। प्रारम्भ 23 नवम्बर, 1981, समाप्ति 24 दिसम्बर, 1981। यह सातवीं लोक सभा का सातवां सत्र और राज्य सभा का 120वां सत्र था। पांच सप्ताह के बाद दोनों सभाएं 24 दिसम्बर, 1981 को अनियत तिथि के लिए स्थगित हुईं।

शरदकालीन सत्र की कुछ विशेषताएं इस प्रकार हैं :—

विधायी कार्य

नवम्बर-दिसम्बर के दौरान संसद् की दोनों सभाओं ने अनेक विधेयक पास किए। इनमें **राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक विधेयक**, 1981 भी शामिल था। इस पर चर्चा के दौरान ग्राम हित के कई पहलुओं पर विचार किया गया। यह लोक सभा में विचारार्थ 26 नवम्बर, 1981 को और राज्य सभा में 10 दिसम्बर, 1981 को प्रस्तुत किया गया। लोक सभा तथा राज्य सभा में क्रमशः 30 नवम्बर, 1981 तथा 14 दिसम्बर, 1981 को पारित किया गया। इसका ग्राम विकास से गहरा सम्बन्ध है।

उद्देश्य-भूमिका

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने 1976 में कृषि और ग्रामीण विकास के लिए वित्त उपलब्ध करने हेतु नीचे से लेकर ऊपर तक समग्र ढांचे को समन्वित करके भारतीय कृषि विकास बैंक की स्थापना का सुझाव दिया था। हमारी सरकार, जो 1977 में ऐसे बैंक की स्थापना को सिद्धान्त रूप में मान चुकी थी, अब राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बक स्थापित करने के लिए यह विधेयक लाई है।

यह बैंक एक कानूनी निगम के रूप में स्थापित किया जायेगा और इस पर सरकार तथा भारतीय रिजर्व बैंक दोनों का नियंत्रण रहेगा। कृषि पुनर्वित्त तथा विकास निगम का समूचा उपक्रम नए बैंक में विलीन कर दिया गया है। यह बैंक राष्ट्रीय ग्रामीण ऋण निधि नामक एक निधि स्थापित करेगा जिस से कर्जों तथा पेशगी रकमों के जरिये वित्तीय मदद की जायेगी। इसके अलावा इस बैंक के अधीन एक राष्ट्रीय ग्रामीण ऋण (स्थिरीकरण) निधि स्थापित की जायेगी। ताकि प्राकृतिक आपदा आदि के समय अल्पकालीन ऋणों को परिवर्तित किया जा सके।

बैंक को अपने कार्यकलापों को पूरा करने के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराए जायेंगे। चुकता पूंजी के अलावा यह केन्द्रीय सरकार, भारतीय रिजर्व बैंक और केन्द्रीय सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त संगठन या संस्थान से भी कर्ज ले सकेगा।

यह बैंक एक अनुसन्धान और विकास निधि भी स्थापित करेगा जिसका इस्तेमाल कृषि-कार्यों और ग्रामीण विकासों से सम्बन्धित प्रशिक्षण और अनुसन्धान आदि के महत्वपूर्ण विषयों के लिए किया जायेगा।

यह बैंक कृषि, लघु उद्योग, कुटीर तथा ग्रामोद्योग, हस्तशिल्प और अन्य ग्रामीण शिल्पों तथा ग्रामीण क्षेत्रों से अन्य सम्बद्ध आर्थिक कार्यों को बढ़ावा देने के लिए नीति, आयोजन और संचालन सम्बन्धी पहलुओं के बारे में एक चोटी के संगठन के रूप में काम करेगा। यह कृषि और ग्रामीण विकास की सभी प्रकार की ऋण सम्बन्धी जरूरतों को पूरा करने और छठी योजना में शामिल नीतियों तथा कार्यक्रमों को अमल में लाने में मदद देने के लिए एक एकल समन्वित संस्था के रूप में कार्य करेगा।

कुछ आशंकाएं

(1) अनेक सदस्यों की राय थी कि इस बैंक के लिए धन का अभाव है। अभाव नहीं होना चाहिए ताकि गांव के लोगों की सेवा करने में मदद मिल सके। बैंक की पूंजी पांच अरब रुपये की है और कर्जे की संभावना 10 अरब रुपये की आंकी गई है। यह लक्ष्य बहुत कम है।

(2) विभिन्न राज्यों में वित्त के मामले में असन्तुलन है।

(3) इस बैंक की स्थापना से ब्याज की दर बढ जायेगी।

(4) इसकी स्थापना से राज्य सरकार अथवा सहकारी बैंकों का क्षेत्राधिकार कम हो जायेगा।

(5) अधिकार के सम्बन्ध में राष्ट्रीय कृषि बैंक और रिजर्व बैंक के बीच संघर्ष होगा।

(6) कृषि की परिभाषा में बागवानी शामिल नहीं है।

(7) जब तक कुछ लोगों के कब्जे में पड़ी जमीन लोगों में नहीं बांट दी जाती, तब तक सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक विकास और ग्रामीण विकास संभव नहीं होगा।

कुछ आशाएं और सुझाव

(1) कुछ सदस्यों की राय थी कि यह स्वागत योग्य विधान है। अच्छा होता यदि इस बैंक के द्वारा दिए जाने वाले कर्जों की पद्धति में हथकरघा उद्योग क्षेत्र को भी शामिल किया जाता।

(2) इस बैंक की ग्रामीण शाखाओं में जो धन जमा हो उसका इस्तेमाल ग्रामीण क्षेत्र में ही हो। ऋण की प्रक्रिया में बैंक को सीमांत तथा छोटे किसानों का ध्यान रखना चाहिए।

(3) इन बैंकों की शाखायें इतनी निकट होनी चाहिएं कि देहात के लोग पैदल चल कर ही बैंकों तक जा सकें।

(4) इस विधेयक के उद्देश्य बहुत ही श्लाघनीय हैं।

(5) जरूरतमन्द लोगों में 40 प्रतिशत लोग खेतिहर मजदूर हैं और लगभग 19 लाख कारीगर हैं। उन्हें सस्ता और आसान शर्तों पर ऋण दिया जाना चाहिए। इसके लिए एक समेकित बीमा फसल योजना बनाई जानी चाहिए जिसमें कीमत सम्बन्धी पहल ध्यान में रखा जा सके।

(6) यह विधेयक एक प्रवर समिति को सौंपा जाना चाहिए ताकि विभिन्न खण्डों की जांच-पड़ताल हो सके और आने वाली बहुत सी जटिलताओं से बचा जा सके। इस बैंक की राशि को बढ़ाया जाना चाहिए।

(7) देश की अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों से 0.75 पैसे की ब्याज दर से कर्जा मिलता है, लेकिन देश के सहकारी बैंकों की ब्याज दर 11 प्रतिशत है। इसे कम किया जा सके तो बहुत अच्छा होगा। कुटीर उद्योगों को तो ऋण मिलता है लेकिन मुर्गी-पालन जैसे धन्धों के लिए भी ऋण मिलना चाहिए ताकि देहात के सभी तबकों को ऊपर उठाया जा सके।

(8) बैंक के प्रबन्धक बोर्ड 85 फीसदी गांव वाले होने चाहिएं, क्योंकि 85 फीसदी लोग गांवों में बसे हैं। तब कहीं सब नियंत्रण हो सकेगा।

(9) बैंक को बड़े पैमाने पर फलों की नर्सरियां, बागवानी और फलों के वृक्ष लगाने का कार्य भी करना चाहिए ताकि अगले दस वर्षों के दौरान देश में फलों का उत्पादन तीन गुना हो सके।

(10) बैंक को जन-सम्पर्क विभाग भी खोलना चाहिए ताकि किसानों से उसका रोजमर्रा का सम्पर्क हो सके और उनमें बैंक के प्रति विश्वास पैदा हो सके।

(11) पिछड़े हुए कृषि राज्यों जैसे, राजस्थान, बिहार, उड़ीसा, आसाम, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश के क्षेत्रों में ट्रैक्टरों तथा अन्य मशीनों के इस्तेमाल को बढ़ावा देने के लिए विशेष धन की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(12) इस बैंक के अध्यक्ष, प्रबन्ध निदेशक अथवा निदेशकों को कम-से-कम 25 दिन तक गांवों में रहना चाहिए ताकि वे गांवों के किसानों की समस्याओं को समझ सकें।

समाधान : सरकारी पक्ष

असलियत यह है कि देश के ग्रामीण क्षेत्रों को ऋण देने के मामले में वाणिज्यिक बैंकों ने उल्लेखनीय प्रगति की है। ब्याज की दर बढ़ने की शंका के सम्बन्ध में स्पष्ट आश्वासन दिया गया है कि बैंक आश्वासन के कारण ब्याज की दरें नहीं बढ़ेंगी। इस बात के लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि बैंक की स्थापना के कारण राज्य सरकार अथवा सहकारी बैंकों का क्षेत्राधिकार कम हो जायेगा क्योंकि यह बैंक किसी विशिष्ट पार्टी को सीधे ऋण नहीं दे सकता। इस बात की भी कोई गुंजाइश नहीं है कि राष्ट्रीय कृषि बैंक और रिजर्व बैंक के बीच संघर्ष होगा क्योंकि बैंक की हिस्सा-पूंजी में केन्द्रीय सरकार का और रिजर्व बैंक का 50-50 प्रतिशत हिस्सा होगा। अतः रिजर्व बैंक अपना कोई अंकुश नहीं लगा सकेगा। इस आलोचना के सम्बन्ध में कि कुल धन केवल कुछ धनी लोगों को ही दिया जाता है, यही किया जा सकता है कि गरीब तबकों के लिए ऋण का कुछ हिस्सा आरक्षित करके उपलब्ध ऋण को और अच्छी तरह वितरित किया जाये। यह आश्वासन दिया गया कि किसी भी ग्रामीण विकास सम्बन्धी कार्य की उपेक्षा नहीं की जायेगी। परिभाषा में बागवानी को भी शामिल किया गया है। बटाईदार भी किसान की परिभाषा में आते हैं। उन्हें भी ऋण-सुविधाओं का लाभ मिलेगा। पश्चिम बंगाल में, जहां बटाईदारों का भूमि पर कोई हक नहीं है, बैंकों को निदेश दिए गए हैं कि बिना जमानत के लाभकारी कार्यों के लिए उन्हें एक हजार रुपये तक लिखित जमानत पर ही ऋण दे दिए जायें।

विधेयक संशोधित रूप में पारित किया गया।

प्रश्नोत्तर काल

चर्चा के विषय थे : एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, संकर फूलों का विकास, दालों और तिलहनों का उत्पादन, बिहार में ग्रामीण विद्युतीकरण, और जलशक्ति से चलने वाला पम्प, दण्डकारण्य परियोजना में शरणार्थियों के लिए कृषि भूमि, उड़ीसा में ग्रामीण क्षेत्रों के लिए डाकघर, ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीफोन सुविधाओं में सुधार, गोबर गैस का उपयोग, देहाती क्षेत्रों में पेयजल की सप्लाई, उड़ीसा में ग्राम्य बैंक।

उपर्युक्त से पता चलता है कि सरकार ग्रामों के चतुर्दिक विकास के लिए न केवल प्रयत्नशील है, बल्कि उस दिशा में ठोस उपाय तन, मन, धन से कर रही है। आशा है कि इनके अच्छे परिणाम यथा-समय निकलेंगे। ○

प्रधान सम्पादक,
212, संसदीय सौध, राज्य सभा,
नई दिल्ली-110001

छोटा परिवार सुखी परिवार

सीमान्त व लघु कृषकों के लिए सहारा

रेशम कीट पालन

ओम प्रकाश मिश्र

श्री तुलसीदास संयोजक कृषक चर्चा मंडल जैतपुरा विकास खन्ड महेवा जनपद-इटावा ने आचार्य किसान विद्यापीठ केन्द्र बकेवर, इटावा को पत्र लिख कर अनुरोध किया कि उनके गांव में नवम्बर के अन्त में एक-दिवसीय उत्पादन-सह-प्रदर्शन शिविर का आयोजन किया जाए। अतः किसान विद्यापीठ केन्द्र द्वारा 28–11–1981 को जैतपुरा गांव में एक-दिवसीय उत्पादन-सह-प्रदर्शन शिविर का आयोजन किया गया। जिसमें भूमि शोधन, बीजशोधन गेहूं की पछैती बुआई, खरपतवार नियंत्रण व फसल सुरक्षा उपायों पर चर्चा की गई, चूहा नियंत्रण व अन्न भण्डारण के व्यावहारिक प्रदर्शन किए गए। उक्त अवसर परही लेखक की भेंट श्री तुलसीदास संयोजक चर्चा मंडल जैतपुर से हुई।

लेखक——आपने नवम्बर के अन्त में ही रबी शिविर के आयोजन के लिए पत्र क्यों लिखा?

संयोजक——हमारे गांव में रबी की मुख्य फसल गेहूं की खेती है जिसका अधिकांश क्षेत्रफल दिसम्बर में बोया जाता है। अतः हमारे कृषकों की मांग थी कि उन्हें गेहूं की पछती खेती से अधिक उत्पादन लेने की नवीनतम तकनीकी जानकारी कराई जाए और दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस गांव में कृषक रेशम कीट पालन का कार्य भी करते हैं। नवम्बर के अन्त में उन्हें कुछ समय मिल जाता है।

लेखक——"रेशम कीट पालन से क्या लाभ है?"

संयोजक——रेशम कीट पालन से गांव के गरीब व अमीर सभी परिवारों को अतिरिक्त आय का सहारा मिल जाता है। रेशम कीटपालन में भूमिहीन कृषक, लघु कृषक, बेरोजगार व विद्यार्थी बड़ी रुचि से भाग ले रहे हैं।

लेखक——विद्यार्थी रेशम कीटपालन क्यों कर रहे हैं?

संयोजक——किसान के पास गांव में खेती के अतिरिक्त अन्य कोई आय का साधन बहुत कम होता है और खेती से तो वर्ष में दो बार ही आय प्राप्त होती है। परन्तु रेशम कीटपालन से वर्ष में कई बार आय होती है। विद्यार्थी में आत्मनिर्भरता बढ़ती है। उससे जो आय होती है वह स्कूल की फीस, कपड़े व किताबों के खर्चे के लिए समय पर काम देती है और विद्यार्थी की पढ़ाई का बोझा मां-बाप पर नहीं पड़ता है।

"आप जानते हैं कि उर्वरकों व कीटनाशक व रोगनाशक दवाओं के भाव काफी बढ़े हुए हैं। खेती की लागत बढ़ गई है। इस लागत के लिए भी किसान को आवश्यकता है समय पर अतिरिक्त आय की। ग्रामीण किसान ऐसा व्यवसाय करना चाहता है जिसमें लागत कम हो, जोखिम कम हो और लाभ अधिक।"

लेखक——संयोजक जी, आप इसके आय व्यय पर कुछ प्रकाश डालिए।

संयोजक——इसमें व्यय तो है ही नहीं, आय ही आय है। रेशम विभाग से रेशम कीट, चन्द्राकी व कीट पालने का फ्रेम कीटपालक को मुफ्त मिल जाता है। रेशम कीट का भोजन-शहतूत की पत्ती वन विभाग से एक रुपये में पूरे वर्ष के लिए मिल जाती है और 1 वर्ष में आय होती है 1200 रुपये से 1500 रु० तक।

लेखक——रेशम कीट पालन में जोखिम क्या है?

संयोजक——कोई जोखिम नहीं है, रेशम कीट अपने जीवन चक्र के अन्तिम 5–6 दिनों में पत्ती बहुत खाता है। अतः इस अवधि में एक व्यक्ति को पूरे दिन पत्ती तोड़ने का कार्य करना पड़ता है। शेष दिनों में 1 या 2 घन्टे प्रति दिन की पत्ती तुड़ाई से कार्य चल जाता है। यही कारण है कि विद्यार्थी अथवा किसान आसानी से इस कार्य को कर लेता है। जो भूमिहीन है अथवा बेरोजगार है उनके पास तो पर्याप्त समय है। वैसे अन्तिम दिनों के लिए दैनिक मजदूर से भी यह कार्य चलाया जाता है। इस प्रकार श्रमिकों को भी मजदूरी का और अवसर मिल जाता है। यदि कीट को भोजन कम मिला तो रेशम भी कम तैयार होगा। फ्रेम में जहां उसे पाला जा रहा है पत्ती व गन्दगी की सफाई न की गई तो रेशम की क्वालिटी भी गिर जाती है।

लेखक——तो क्या रेशम कीट शहतूत की पत्ती पर ही पाला जा सकता है?

संयोजक——जी नहीं, रेशम कीट शहतूत, अन्डी व अर्जुन के पेड़ पर भी पाला जाता है। अर्जुन पेड़ से जो रेशम तैयार होता है उसे टसर कहते हैं।

लेखक——आपके यहां रेशम कीटपालन किस खाद्य पर किया जाता है?

संयोजक——हमारे गांव में सभी कीटपालक शहतूत की पत्ती प्रयोग करते हैं। वैसे जहां पर अन्डी का क्षेत्रफल अधिक हो वहां अन्डी पर भी रेशम कीटपालन किया जा सकता है।

लेखक——क्या शहतूत पर एक ही प्रकार के कीट पाले जाते हैं?

संयोजक——नहीं, रेशम कीट की 4 जातियां हैं जिनसे विभिन्न रंगों का रेशम, ककून, तैयार होता है जैसे 1—मल्टी

(हल्का पीला), 2—नस्तरी (हल्दी की भांति पीला), 3—वाई (दूध की भांति सफेद), 4—डाइजा (रंग हल्का पीला व ककून बड़ा)।

लेखक—सबसे अच्छी किस्म कौन सी है?

संयोजक—सबसे अच्छी किस्म वाई है। इसका कीट जापान से मंगाया गया है। इसका ककून 22.00 रुपये प्रति किलो बिकता है जबकि मल्टी का भाव 14.00 रु० प्रति किलो है।

लेखक—फिर आप वाई को ही अधिक क्यों नहीं तैयार करते हैं?

संयोजक—इस कीट के लिए ठन्डे मौसम की आवश्यकता होती है। अक्तूबर व नवम्बर उपयुक्त महीने हैं। गर्म मौसम में कीट मर जाता है। दूसरी बात यह भी है कि अक्तूबर नवम्बर तक शहतूत के पेड़ों पर पत्ती भी कम हो जाती है।

लेखक—वर्ष में कितनी बार यह कार्य होता है?

संयोजक—5 बार—मार्च-अप्रैल, अप्रैल मई, जुलाई-अगस्त, अगस्त-सितम्बर, अक्तूबर-नवम्बर।

लेखक—रेशम कीट के जीवन की कुछ जानकारी है क्या आपको?

संयोजक—रेशम के कीड़े कीटपालक को रेशम विभाग के माध्यम से देहरादून से प्राप्त होते हैं। कीट पालक को 10 दिन के बच्चे मिलते हैं जब तक वे दो बार मौल्टिंग कर चुके होते हैं। कीट पालक इन्हें फ्रेम में रखता है जिसमें शहतूत की पत्ती का भोजन देता है और यहां भी दस दिन म दो बार मौल्टिंग करता है। इसके बाद 5—6 दिन में बहुत पत्ती खाता है। फिर इसे चन्द्राकी में रख देते हैं जहां यह ककून बनाता है। एक कीट पालक को 40—50 लैन्स दिए जाते हैं। एक नर व एक मादा के क्रोस से जो अन्डे तैयार होते हैं वे लेन्स कहलाते हैं। एक लैन्स में 400 के लगभग कीट होते हैं। इस प्रकार रेशम कीट का जीवन चक्र 25—30 दिन से अधिक नहीं होता। चन्द्राकी से 5 दिन बाद ककून तोड़ कर कीटपालक बिक्री केन्द्र पर ककून की बिक्री कर देता है। इस प्रकार एक बार में लगभग 250-300 रुपये की आय कीटपालक को हो जाती है।

इस होली के नये भाव हैं

कोई न होगा ऊंचा-नीचा
अब सब होंगे एक समान
होली आई बनकर साथी
नया भाव आदर्श महान।
क्यों रहीम तुम कहां चले
क्या रामू के रंग लगाने?
चलो चलें हम एक साथ ही
जो भी सोया उसे जगाने।
वाह भाई, सब ओर सजे हैं
खेतों में ढेरों खलियान
होली आई बनकर साथी
नया भाव आदर्श महान।
जीवन रंग बदल रहा है
अर्थ हुए गहरे-गहरे
सरस हंसी चेहरों पर जागी
चले कदम ठहरे-ठहरे।

इस धरती का हरेक कृषक
बन गया अपना ही भगवान
होली आई बनकर साथी
नया भाव आदर्श महान
इस होली के नये भाव हैं
इसके मन में नहीं प्रपंच
नहीं बैर का चलन गांव में
हिन्दू—हरिजन एक मंच।
साम्प्रदायिकता के विषधर को
निगला हमने, गाते गान
होली आई बनकर साथी
नया भाव आदर्श महान।

पूरन सरमा
सिकन्दरा-303326
(जयपुर-राजस्थान)

लेखक—कृषक चर्चा मंडल के संयोजक होने के नाते आपका इसमें क्या योगदान है?

संयोजक—किसान विद्यापीठ केन्द्र बकेवर, इटावा के पंच-दिवसीय कृषक प्रशिक्षण शिविरों में प्रशिक्षण लेने से कृषक यह भलीभांति समझने लगा है कि उसे ऐसा धन्धा अपनाना चाहिए जिसमें लागत कम हो और आमदनी अधिक। अतः हमारे चर्चा मंडल के सभी सदस्य कीटपालन के कार्य में लगे हुए हैं। पहले यह कार्य वर्ष में केवल दो बार शरद ऋतु व बसन्त ऋतु में किया जाता था और अब नवीन जानकारी के कारण वर्ष में 5 बार किया जाने लगा है। हमारे गांव में 80 कीटपालक हैं। इससे ग्रामीण श्रम का उपयोग होता है और अतिरिक्त आय होती है। कीटपालकों की एक रजिस्टर्ड सोसाइटी है जिसके 32 सदस्य हैं। इस प्रकार 48 कीटपालक जो कि सोसाइटी के सदस्य नहीं हैं वे भी इस कार्य में लगे हुए हैं।

लेखक—कीटपालकों के हित के लिए आप क्या-क्या कर रहे हैं?

संयोजक—"कीट पालकों को उनके ककून का उचित मूल्य मिले इसके लिए इटावा जनपद की 6 सोसाइटी जो की रेशम कीट पालन का कार्य करती हैं उनकी जिला-स्तर पर केन्द्रीय रेशम उत्पादन गृह उद्योग सहकारी संघ लि० इटावा की स्थापना की गई है। सोसाइटी के सदस्यों को रेशम कीट-पालन की सुविधाओं में प्राथमिकता दी जाती है। लेकिन संयोजक के नाते जो कीटपालक सोसाइटी के सदस्य नहीं भी हैं उनका मैं उचित ध्यान रखता हूं।

लेखक—सभी कीटपालक सदस्य क्यों नहीं हैं?

संयोजक—सोसाइटी के सदस्य की हिस्सा-फीस अधिक है। इसलिए विद्यार्थी अथवा भूमिहीन कृषक या बेरोजगार युवक इसके सदस्य नहीं है। फिर भी आज हमारे गांव के बेरोजगार, सीमान्त व लघु कृषकों के लिए अतिरिक्त आय हेतु एकमात्र सहारा है—रेशम कीट पालन। ●

(ओमप्रकाश मिश्र)
प्रशिक्षक (कृषि)
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र
बकेवर, इटावा।

गो माता जो मरते दम तक मानव जाति की सेवा करती है

प्रो० धीरेन्द्र दीक्षित

देश में संपूर्ण गोवधबंदी लाने हेतु सर्वोदय-पितामह श्री विनोबा भावे ने हाल ही में प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को पत्र लिखकर अनुरोध किया है कि गोरक्षा के विषय को संविधान की राज्य सूची से निकाल कर समवर्ती सूची में शामिल किया जाए, भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने विनोबाजी के आमरण अनशन के समय उन्हें उक्त आशय का संविधान संशोधन शीघ्र ही संसद में लाने का आश्वासन दिया था। भू-दानी नेता की अनशन की समाप्ति के बाद मोरारजी देसाई ने अपना वचन पूरा किया भी व काफी विरोध के बावजूद संसद में उपयुक्त विधेयक प्रस्तुत किया गया, पर बाद में संसद भंग हो जाने के कारण विधेयक कानून न बन सका।

भारतीय संविधान में नीति-निदेशक सिद्धांतों के अन्तर्गत यह स्पष्ट प्रावधान है कि "राज्य गायों व बछड़ों तथा दूसरे दुधारू और भारवाही पशुओं की हत्या को रोकने का प्रयास करेगा.. आवश्यक कदम उठाएगा।" सर्वोच्च न्यायालय के 1958 में दिए गए फैसले द्वारा इसकी पुष्टि होती है। 1967 में भारत सरकार द्वारा नियुक्त विशेष गोरक्षा समिति की सिफारिशें भी गोवध प्रतिबन्ध के पक्ष में है। फिर भी केरल व पश्चिम बंगाल की सरकारें (शेष राज्यों में गोहत्या पर कानूनी रोक है) गोहत्या बन्दी को धार्मिक कट्टरता से प्ररित व धर्म-निरपेक्षता के विरुद्ध मानती है।

गोहत्या बन्दी का प्रश्न भावनात्मक, आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों से जुड़ा हुआ है। गाय सदियों से भारत की ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था का मेरुदण्ड रही है। किन्तु गाय के प्रति श्रद्धा व पूजा की भावना का विकास हिन्दुओं में क्रमिक ढंग से हुआ है। सिन्धु घाटी सभ्यता के पुरातत्व अवशेषों (ईसा से 3000 साल पहले) से पता चलता है कि उस समय गाय को कोई खास दर्जा नहीं दिया गया था, मोहरों पर अन्य पालतू मवेशियों के साथ सांड़ (बैल) की आकृत्ति भी अंकित है, जैसे कौशाम्बी में पाए गए (संभवतः शंगु युग का) सिक्के से प्रतीत होता है। इसी तरह का व लगभग इसी काल का अन्य सिक्का अयोध्या में भी मिला है। गाय के दर्जे का अशोक के राज्य काल में संकेत हमें अशोक स्तम्भ देखने से मिल जाता है। स्तम्भ के शीर्ष पर सिंह है, गाय नहीं। उसी काल के प्राप्त स्तंभों में गाय अन्य पालतू पशुओं के साथ नीचे अंकित है। डा० हंसमुख धी० सांकलिया के अनुसार प्राचीन भारत में गोमांस खाने की प्रथा थी। इस प्रख्यात पुरातत्ववेत्ता के मत में ईसा से 3000 से 700 वर्ष पूर्व तक आदमी की दौलत व हैसियत उसके पास रहने वाले मवेशियों से आंकी जाती थी। इन मवेशियों में गाय को आर्यों ने महत्वपूर्ण स्थान दिया था।

महामहोपाध्याय पी० वी० काण अपने ग्रंथ "धर्मशास्त्र का इतिहास" में लिखते हैं, "यह स्पष्ट है कि इस काल में गाय को देवता के समान माना जाता था तथा उसकी पूजा की जाती थी, फिर भी कई मौकों पर गोवध होता था, "महाभारत में 'गोमेध यज्ञों' का उल्लेख है पुराणकाल में इस बात के कई प्रमाण उपलब्ध हैं जिनसे यह ज्ञात होता है कि शादी-ब्याह तथा राज्याभिषेक जैसे समारोहों में बैलों का काटा जाना आम परम्परा थी। महापण्डित राहुल सांस्कृत्यायन ने उन दिनों राजसी आतिथ्य परम्परा के प्रमुख घटक के रूप में गोवध के बारे में लिखा है। मालवा का राजा रंतिदेव अपने रसोइघरों के औदार्य के लिए प्रसिद्ध था। मेहमानों और आम लोगों की खातिरदारी के लिए उसके यहां 2000 गायें प्रति दिन कटती थीं। पशुधन की इस पैमाने पर हत्या उस जमाने में गाय के समाज में स्थान की द्योतक है।

चन्द्रगुप्त मौर्य के विख्यात प्रधानामात्य चाणक्य का "अर्थशास्त्र" ईसा पूर्व चतुर्थ शताब्दी के भारत का सही चित्रण करता है तथा राजनीति अर्थशास्त्र व समाजशास्त्र पर प्रमाणित ग्रंथ माना जाता है। इस पुस्तक में गोमांस-भक्षण तथा गोवध के उस समय प्रचलित होने का प्रमाण मिलता है। गाय मारने वाले को "गोहन्तक" कहा जाता था। गोमांस खुले आम बाजारों में बिकता था। गौ-हत्यारे और गोमांस-सेवी में अवश्य भेद माना जाता था जैसा कि तिब्बत में भी अभी भी यह "मूल्यांकन" है। बौद्धकाल में गोमांस खाए जाने के प्रमाण मिलते हैं। कहा जाता है कि स्वयं भगवान बुद्ध ने गोमांस का सेवन किया था। चीनी यात्री फाह्यान ने तत्कालीन भारत में खाने के विधि-निषेधों का जिक्र करते हुए लिखा है कि लोग लहसुन, प्याज तक नहीं खाते थे परन्तु गोमांस भक्षण पर प्रतिबन्ध के विषय में वह मौन है। राहुल सांस्कृत्यायन के अनुसार शकों का तीसरी शताब्दी में पतन के पश्चात् गोमांस खाने की प्रथा का अन्त हो गया। वैदिक काल में तो सोमरस भी गाय की खाल में तैयार किया जाता था, फिर भी यह निश्चित है कि दुधारू गायों का वध तब भी निषिद्ध था। चतुर्थ शताब्दी में जब "मनुस्मृति" लिखी गई, बलि आदि कार्यों के अवसर पर मांसाहार वर्जित नहीं था, फिर भी शाकाहार श्रेयस्कर माना जाता था। मनु के समय तक गोहत्या गौण अपराध था—जैसे अपनी पत्नी को बेच देना अथवा अपने बड़े भाई के पहले विवाह कर लेना।

"शुक्र नीति में, जिसे नवीं" शताब्दी की कृति माना जाता है, गाय को परम् पूजनीय कहा गया है तथा गोवध के विरोध में युद्ध को शुभ माना गया है, उन दिनों गाय के चमड़े से बने जूते पर पूर्ण पाबन्दी लगा दी गई थी। "अथर्ववेद" में मेहमान के सम्मान में बैल या बकरा काटने के अलावा सामान्यतः मद्य-सेवन व मांसाहार को तुच्छ समझा गया है। गोधन की तेजी से घटती संख्या से चिन्तित होकर बुद्ध और अशोक ने प्राणि-दया तथा अहिंसा का उपदेश देना शुरू कर दिया। "पराशर स्मृति" के अनुसार (पांचवीं शताब्दी) कलियुग में पांच घोर पापकर्म ये हैं--(1) अश्वबलि, (2) गो बलि, (3) संन्यास (4) मृतक को मांस अर्पण तथा (5) अपने जीजा से पुत्र प्राप्ति।

"वाल्मीकि रामायण" में राम के वनवास के दौरान मांस खाना छोड़ देने का उल्लेख है। भवभूति के प्रसिद्ध नाटक "उत्तररामचरित्रम्" में दो चरित्रों के बीच जो संवाद कहलाया गया है उसमें गुरु वशिष्ठ के लिए बछिया मारे जाने का उल्लेख है। और वशिष्ठ ऋषि से बढ़कर ब्राह्मण कौन हो सकता है। वशिष्ठ के प्रमुख विरोधी विश्वामित्र ने तो दुर्भिक्षकाल में कुत्ते का मांस खाया था। परवर्तीकाल में गोमाता की समाज में प्रतिष्ठा तथा गोदान की उदात्तता जैसे आदर्शों की स्थापना के बाद तो गाय को देवत्व प्रदान कर दिया गया। कामधेनु की उपासना लक्ष्मी-पूजा के समकक्ष समझी जाने लगी। रामायण के 'कौशिकोपाख्यानम्" प्रकरण में वशिष्ठ - विश्वामित्र संघर्ष का वर्णन करते हुए वाल्मीकि ने कामधेनु का उल्लेख किया है। कामधेनु के सेवक ब्रह्मर्षि वशिष्ठ गोमांस भक्षक (भवभूति की दृष्टि में) कैसे बन गए यह हमारे पवित्र साहित्य की एक विडम्बना है। इसी गाय ने विश्वामित्र व उनकी सेना के छक्के छुड़ा दिए थे। राजर्षि विश्वामित्र ने पराजय स्वीकारते हुए कहा था--"ब्रह्मतेजोवलंबलम्"।

कामधेनु कन्या नन्दिनी का कालिदास की अमर कृति "रघुवंश" में बड़ा सुन्दर वर्णन है। हिन्दू संस्कृति और सभ्यता में गाय के महत्व व योगदान का इसी से पता चलता है कि गोवध को ब्राह्मण हत्या के तुल्य माना जाने लगा था। एक प्रसिद्ध संस्कृत श्लोक में "गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानिचतुर्दशाः" (गाय के अंगों में चौदहों भवनों का निवास है) कहा गया है। "पंचगव्य" की पाप-दहनकारी क्षमता को अग्नि को ईंधन जलाने की क्षमता के समान कहा गया है ("दहति इव ईंधनम्")।

कृष्ण-संप्रदाय के उदय के साथ (65-225 ई०) तो गाय को अनन्य स्थान मिलने लगा। "भागवत पुराण" में भगवान श्रीकृष्ण के गोमाता के साथ अन्योन्याश्रित सम्बन्ध का स्पष्ट दिग्दर्शन मिलता है। विद्यापति तथा वल्लभाचार्य ने इसी कृष्णगोभक्ति परम्परा को आगे बढ़ाया। कृष्ण लीला पुरुषोत्तम तथा लोकोत्तर नायक बन गए तथा वैष्णवों के बढ़ते प्रभाव के साथ ही साथ शाकाहार हिन्दुत्व का पर्याय ही बन गया। 12वीं सदी में गुजरात के राजा कुमारपाल ने गोहत्याबन्दी की घोषणा की। हर पखवाड़े के 8वें, 11वें, व 14वें दिन हालांकि गोवध की अनुमति दी गई। सूफी संत जो भारत में आए वे भी गो-उपासना में विश्वास करने लगे। विदेशी आक्रमणों के दौरान समस्त हिन्दू जाति को एक सूत्र में पिरोने के लिए गाय ने एकता व संगठन के प्रतीक के रूप में ऐतिहासिक भूमिका निभाई। स्मरणीय है कि अकबर जैसे प्रबुद्ध मुगल बादशाह ने "फरमान" जारी कर गोवध पर पाबन्दी लगा दी थी। भारतीय इतिहास में अकबर और अशोक के शासनकाल गोहत्या के कलंक से मुक्त रहे।

यहां यह विचारणीय है कि यूरोपियन लोगों में घोड़ा व कुत्ता उपयोगी पशु माने जाते रहे हैं। घोड़ा सवारी के लिए, कृषि कर्म में सहायतार्थ तथा भारवाही मवेशी के रूप में यूरोप में महत्वपूर्ण समझा जाता रहा है। इसी लिए आज भी यूरोप में अश्वमांस भक्षण वर्ज्य है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रेमी हमारे कुछ हिन्दू-बन्धु कुत्ते से प्यार करेंगे, उसे दूध पिलाएंगे पर गोपालन की बात करो तो वंकभृकुटि कर नाक-भौं सिकोड़ेंगे। पाठकों को शायद आश्चर्य हो कि माओ ने चीन में "भारवाही पशुओं" किसानों के लिए खजाना माना था। 50 साल पहले चीन के हेंग्स्टन क्षेत्र में गोवंशवध पर प्रतिबन्ध था। चीनी-जन कभी भी गाय के भक्त नहीं रहे परन्तु आर्थिक कारणों से प्रेरित होकर उन्होंने गोहत्या पर रोक लगा दी थी।

यह सत्य है कि परम्परावादी, सनातनी हिन्दू की भावनाएं गाय से जुड़ी हैं। तथा गोहत्या का प्रश्न संवेदनाओं पर भी आधारित है। पर भावनाएं किस राष्ट्र में नहीं। आज भी सोवियत रूस में कबूतरों को वहां के व्यक्ति बढ़े मनोयोग से दाने खिलाते हैं। उनको मारना अच्छा नहीं मानते। भावनाएं जो जुड़ी हैं इस पक्षी से उनकी कबूतर-वध दण्डनीय है वहां। पश्चिम बंगाल व केरल में कोटि-कोटि हिन्दू-बांधवों की गाय के प्रति भावनाओं का सम्मान कर यदि गोहत्याबंदी लगाई जाती है, तो अल्पसंख्यक मुसलमान व ईसाई भाई भी उसका विरोध भला क्यों करेंगे? जम्मू व काश्मीर जैसे मुस्लिम-बहुल राज्य में क्या गोवध पर कानूनी पाबन्दी कारगर सिद्ध नहीं हुई है।

यह सही है कि गायों के प्रति हिन्दुओं की श्रद्धा कितनी ही हो पर वे ही गोवध के लिए मुख्यतः उत्तरदायी हैं। यह भी सही है कि बैलों को खेत में जोतते समय अथवा बैलगाड़ी में बैल हांकते समय ये ही हिन्दू असाधारण क्रूरता तथा निर्दयता से पेश आते हैं। कृषि कर्म में उपयोगी बैल के लिए गाय तथा दुग्ध उत्पादन के लिए भैंस की प्राथमिकता भी हिन्दुओं के दृष्टिकोण में स्पष्ट दिखाई देती है। हालांकि यह सिद्ध हो चुका है कि गाय के दूध में "विटामिन ए" के स्रोत "कैरोटीन" की मात्रा में भैंस के दूध की अपेक्षा ज्यादा रहती है तथा उसका प्रोटीन हजम करने में आसान होता है फिर भी भैंस के गाढ़े दूध (ज्यादा मलाई निकलने की वजह से) के प्रति आम झुकाव समझ में नहीं आता। वस्तुतः दुग्धोत्पादन व्यवसाय की दृष्टि से गायों के विकास या उनकी

नस्लसुधार की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। गोवध के कारण बैलों की जोड़ी की कीमत आज 2000 रु० के करीब है जो आज से कोई 20 वर्ष पूर्व मात्र 200 रु० थी। अतः गोहत्या पर रोक से बैल जोड़ी का मूल्य भी कम हो जाएगा।

वस्तुतः सवाल सीधा-सादा है। संविधान की भावना के अनुरूप तथा सुप्रीम कोर्ट की व्याख्या से सम्मत पूर्ण गोवध बन्दी सरकारों का नैतिक उत्तर-दायित्व व एक संवैधानिक आवश्यकता है। देश में गोमांस का उपयोग व्यापक स्तर पर नहीं होता है। इस्लाम में मुहम्मद पैगम्बर के अनुसार "दूध दवा है, मक्खन सेहत है पर गाय का गोश्त रोग है, अतः उससे सावधान रहो।"

यह कहना भी बेहद हास्यापद व मूर्खतापूर्ण है कि केवल बूढ़ी व सूखी गाएं ही देश के 2000 कसाईखानों में काटी जाती हैं, वस्तुतः 30 लाख कटने वाली गायों में अधिकांश स्वस्थ, तरुण व दुधारू गाएं रहती हैं, जो पड़ोसी प्रदेशों से कसाई खरीदकर लाते हैं। ये लोग उनके दांत व टांगें तोड़कर कानून से बचने के प्रयत्न करते हैं। औसत गाय का जीवनकाल 18 से 20 वर्ष रहता है। वह चार साल की उम्र से दूध देना शुरू करती है तथा 16-17 वर्ष की आयु तक दुधारू बनी रहती है। केवल 2-3 साल ही वह अपने मालिक पर "बोझ" रहती है। तब भी वह गोबर जो उत्तम खाद व मूल्यवान ईंधन भी है, देती रहती है। गोबर गैस प्लांट में गोबर का उपयोग कर गैस व बिजली भी पैदा की जा सकती है। देश में गोबर का वार्षिक उत्पादन 90 करोड़ टन है, जिसका मूल्य अनुमानतः 9000 करोड़ रुपये होता है। "पशु संरक्षण तथा विकास समिति" की रिपोर्ट (1955-56) के अनुसार वृद्ध अथवा अपंग गाय पर सालाना 23 रु० प्रति गाय खर्च आता है जबकि "राष्ट्रीय आय समिति" (1951) के अनुसार प्रति गाय गोबर व गोमूत्र द्वारा अर्जित वार्षिक आय ही 52 रु० है। अतः गाय कभी भी अनुत्पादक नहीं कही जा सकती।

दुर्भाग्यवश जिन प्रांतों में गोहत्या पर कानूनी रोक है वहां गायों के अन्य राज्यों में ले जाए जाने पर पाबन्दी न होने से समस्या अधिक जटिल हो गई है। 20 नवम्बर व 26 दिसम्बर, 1976 के दरम्यान कलकत्ता के एक स्टेशन पर 12,330 मवेशी कत्ल के लिए पंजाब उत्तर प्रदेश व हरियाणा से उतारे गए। केरल में निकटवर्ती तमिलनाडु से प्रति सप्ताह 48,000 पशु वध के लिए आते हैं। पश्चिम बंगाल में 14 वर्ष से कम आयु के गायों के वध पर रोक सम्बन्धी नियमों का भी यदि ठीक से पालन हो तो 75 प्रतिशत गायों का कटना बन्द हो जाएगा।

अन्तिम विश्लेषणों में गोवंश का वीभत्स वध निःसंदेह कालबाह्य, अनर्थकारी तथा असंवैधानिक है तथा इस घिनौने अध्याय की समाप्ति तत्काल होना अनिवार्य एवं अपरिहार्य है। □

जानकर लाभ उठाइये

राधेश्याम

* यदि कपड़ों पर प्रेस करते समय जलने का दाग लग जाए तो दाग पर थोड़ा नमक लगा दें इससे दाग मिट जाएगा।
* यदि तवा काला पड़ गया तो गर्म तवे पर थोड़ी सी दही या लस्सी डालने से तवा बिल्कुल साफ हो जाता है।
* कपड़ों को साफ अखबार में लपेट कर रखने से कीड़े नहीं लगते।
* यदि कपड़ों पर कत्थे के दाग लग जाएं तो इस पर कच्चा दूध लगाने से साफ हो जाते हैं।
* यदि हरी मिर्च के डंठल तोड़ कर रखा जाए तो जल्दी खराब नहीं होती।
* यदि चावल में थोड़ा-सा नमक मिला कर रखा जाए तो उसमें कीड़े नहीं लगते।
* दाल बनाने से पहले यदि उसमें एक-दो बूंद तेल की डाल दी जाएं तो दाल शीघ्र तयार हो जाएगी।
* यदि आलू बनाते समय उसमें थोड़ा सा नींबू का रस डाल दिया जाए तो आलू अधिक स्वादिष्ट और दूधिया बनेंगे।
* यदि किसी स्थान पर बदबू आ रही है तो वहां पर नमक के पानी से साफ करने से बदबू हट जाएगी।
* दही जमाते समय बर्तन के चारों तरफ फिटकरी का हल्का लेप करने से दही गाढ़ा जमता है।
* यदि सब्जी में नमक अधिक हो जाए तो उसमें थोड़े आलू उबालकर डालने से यह शिकायत दूर हो जाती है।
* प्याज को रोज दही के साथ खाने से खून साफ होता है।
* यदि किसी स्थान पर मच्छर अधिक हों तो वहां पर प्याज छीलकर रख देने या उसका धूंआ देने से मच्छर दूर हो जाते हैं।
* मक्खियों को दूर करने के लिए गर्म तवे पर लोंग की खुशबू देने से मक्खियां दूर हो जाएंगी।
* यदि लोहे पर जंग लग जाए तो उसे नमक के पानी में धोने से जंग दूर हो जाता है।

गांधीजी और शिक्षा

सुरेन्द्र अग्रवाल

भारत में विदेश शासन से पहले प्राचीन गुरू और आचार्यों के मार्गदर्शन में एक अच्छी और सुगम शिक्षा प्रणाली प्रचलित थी। सन् 1833 में पहले इस प्रणाली में परिवर्तन होने शुरू हुए, फिर भी थोड़ी बहुत व्यवस्था बनी रही, पर इसके पश्चात् सार्वजनिक शिक्षा की हालत शोचनीय बनती गई। किसी भी अच्छी व्यवस्था की नींव डालने के लिए उत्तम आचार्य की आवश्यकता होती है। पर, यह भी सत्य ही माना जाता है कि किसी भी महान गुरू के दर्शन दुनिया में दीर्घ काल के बाद ही होते हैं। ऐसा गुरू अपने ही जीवन से पहचाना जाता है। गांधी जी ऐसे ही महान गुरू थे। आज की विकट परिस्थिति में गांधी जी के शिक्षा सम्बन्धी विचार अतीत की तरह ही सामयिक है। कालटर्न वाशबर्न ने रीमिकर्स आफ मेनकाइण्ड में लिखा है कि शिक्षा के ध्येय के बारे में बापू से जब पूछा गया कि भारत को स्वराज्य मिल जाएगा तब शिक्षा का आपका क्या ध्येय होगा? बापू का उत्तर था चरित्र निर्माण। मैं साहस, बल, सदाचार और बड़े लक्ष्य के लिए काम करने में आत्मोत्सर्ग की शक्ति का विकास कराने की कोशिश करूंगा। यह साक्षरता से ज्यादा महत्वपूर्ण है, किताबी ज्ञान तो उस बड़े उद्देश्य का एक साधनमात्र है।

इसी बात को आगे बढ़ाते हुए जब प्रश्न किया गया कि "क्या शिक्षा के जरिए आप किसी खास तरह का सामाजिक संगठन पैदा करने की कोशिश करेंगे? बापू का उत्तर था कि मेरा ख्याल है कि अगर व्यक्ति का चरित्र निर्माण करने में हम सफल हो जाएंगे, तो समाज अपना काम आप संभाल लेगा। इस प्रकार जिन व्यक्तियों का विकास हो जाएगा, उनके हाथों में समाज के संगठन का काम मैं खुशी से सौंप दूंगा।"

बापू के शिक्षा सम्बन्धी विचार धीरे-धीरे पनपे। ये दिवास्वप्न नहीं थे। उन्होंने अपने विचारों को परखा और परीक्षण की कसौटी पर कसा था। बापू ने शिक्षा सम्बन्धी प्रयोग और परीक्षण दक्षिणी अफ्रीका में टालस्टाय फार्म पर शुरू किए। बापू ने ये प्रयोग वहां के निवासी बच्चों तक सीमित नहीं रखे, अपने चार पुत्रों को भी इस में शामिल किया। भारत में गांधी जी ने साबरमती और सेवाग्राम आश्रम में शिक्षा सम्बन्धी अपने प्रयोगों को जारी रखा और समयानुकूल परिवर्तन कर, अपने विचारों को समाज के सामने रखा।

आठ मई उन्नीस सौ सैंतीस के हरिजन में बापू ने लिखा था कि 'मेरी राय में बुद्धि की सच्ची शिक्षा शरीर की स्थूल इन्द्रियों अर्थात् हाथ, पैर, आंख, नाक, कान, वगैरा के ठीक-ठीक उपयोग और तालीम के द्वारा ही हो सकती है। दूसरे शब्दों में, बच्चे द्वारा इन्द्रियों का बुद्धिपूर्वक उपयोग उसकी बुद्धि के विकास का उत्तम और जल्द से जल्द तरीका है परन्तु. शरीर और मस्तिष्क के विकास के साथ आत्मा की जागृति भी उतनी ही नहीं होगी, तो केवल बुद्धि का विकास घटिया और एकांगी वस्तु ही साबित होगा। आध्यात्मिक शिक्षा से मेरा मतलब हृदय की शिक्षा है। इसलिए मस्तिष्क का ठीक ठीक और सर्वांगीण विकास तभी हो सकता है, जब साथ-साथ बच्चे की शारीरिक और आध्यात्मिक शक्तियों की भी शिक्षा होती रहे। ये सब बातें अविभाज्य हैं। इसलिए इस सिद्धांत के अनुसार यह मान लेना घोर कुतर्क होगा कि उनका विकास अलग-अलग या एक दूसरे से स्वतन्त्र रूप में किया जा सकता है।'

इसी बात को आगे बढ़ाते हुए बापू ने इकत्तीस जुलाई उन्नीस सौ सैंतीस के हरिजन में फिर लिखा कि 'शिक्षा से मेरा अभिप्राय यह है कि बच्चे और मनुष्य के शरीर और बुद्धि और आत्मा के सभी उत्तम गुणों को प्रगट किया जाए। पढ़ना-लिखना शिक्षा का अन्त तो है ही नहीं, वह आदि भी नहीं है। वह पुरुष और स्त्री को शिक्षा देने के साधनों में से केवल एक साधन है। साक्षरता स्वयं कोई शिक्षा नहीं है। इसलिए मैं तो बच्चे की शिक्षा का प्रारम्भ इस तरह करूंगा कि उसको कोई उपयोगी दस्तकारी सिखाई जाए और जिस क्षण से वह अपनी तालीम शुरू करे उसी क्षण से उसे उत्पादन का काम करने योग्य बना दिया जाए।"

मेरे मतानुसार इस प्रकार की शिक्षा पद्धति में मस्तिष्क और आत्मा का उच्चतम विकास संभव है। इतनी सी बात है कि आजकल की तरह प्रत्येक दस्तकारी केवल यांत्रिक ढंग से न सिखाकर वैज्ञानिक ढंग से सिखानी पड़ेगी। अर्थात् बच्चे को प्रत्येक प्रक्रिया का कारण जानना चाहिए।

बापू के विचार में शिक्षा दस्तकारी की धुरी पर आधारित होनी चाहिए। नौ अक्तूबर उन्नीस सौ सैंतीस के हरिजन में बापू ने इसी बात पर जोर देते हुए लिखा, इस प्रकार कताई और धुनाई जैसे ग्रामोद्योग द्वारा प्राथमिक शिक्षा देने की मेरी योजना में कल्पना यह है कि यह एक ऐसी शान्त सामाजिक क्रान्ति का अग्रदूत बने, जिसमें अत्यन्तदूरगामी परिणाम भरे हुए हैं। इससे नगर और ग्राम के

सम्बन्धों का एक स्वास्थ्यप्रद और नैतिक आधार प्राप्त होगा और समाज की मौजूदा अरक्षित अवस्था और वर्गों के परस्पर विषाक्त सम्बन्धों की कुछ बड़ी से बड़ी बुराइयों को दूर करने में बहुत सहायता मिलेगी। इससे हमारे देहातों का दिन-दिन बढ़ने वाला ह्रास रुक जाएगा और एक ऐसी अधिक न्यायपूर्ण व्यवस्था की बुनियाद पड़ेगी, जिसमें गरीब अमीर का अप्राकृतिक भेद न हो और हर एक के लिए गुजर के लायक कमाई और स्वतन्त्रता के अधिकार का आश्वासन हो। और यह सच किसी भयंकर और रक्तरंजित वर्गयुद्ध अथवा बहुत भारी पूंजी के व्यय के बिना ही हो जाएगा। भारत जैसे विशाल देश का यंत्रीकरण किया गया, तो इन दोनों बातों में से एक तो जरूर होगी। मेरी योजना में विदेशों से मंगाई हुई मशीनरी या वैज्ञानिक और यांत्रिक दक्षता पर भी लाचार होकर निर्भर करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। आखिरी बात यह है कि बड़े-बड़े विशेषज्ञों की बुद्धि की जरूरत न होने के कारण एक तरह से जनसाधारण के भाग्य का निपटारा स्वयं उन्हीं के हाथ में रहेगा।

भारत की गुरुकुल व्यवस्था और बापू के शिक्षा सम्बन्धी विचारों में काफी साम्य है। शारीरिक श्रम और दस्तकारी दोनों में उतने ही महत्वपूर्ण है जितना साहित्य और बौद्धिक विकास। बापू की बुनियादी तालीम की यह भूमिका है।

पढ़ाई के माध्यम के बारे में भी बापू का दृढ़ विचार था कि शिक्षा का माध्यम मातृभाषा ही हो न कि विदेशी भाषा। बापू ने तो यहां तक कहा कि हमेशा से मेरी मान्यता रही कि ऐसे भारतीय जो अपने बच्चों को बचपन से अंग्रेजी में सोचना और बोलना सिखाते हैं। अपने बच्चों के साथ और देश के साथ विश्वास-घात करते हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि बापू अंग्रेजी के विरोधी थे। बापू ने नौ जुलाई उन्नीस सौ अड़तीस के हरिजन में लिखा था कि इससे यह हरगिज न समझना चाहिए कि मैं अंग्रेजी भाषा या उसके श्रेष्ठ साहित्य का महत्व घटाना चाहता हूं। 'हरिजन' मेरे अंग्रेजी प्रेम का पर्याप्त प्रमाण है। लेकिन उसके साहित्य की महत्ता भारतीय राष्ट्र के लिए उससे अधिक उपयोगी नहीं, जितना कि इंग्लैंड का समशीतोष्ण जलवायु या वहां के सुन्दर नैसर्गिक दृश्य हो सकते हैं। भारत को तो अपने ही जलवायु, नैसर्गिक दृश्यों और साहित्य में तरक्की करनी होगी, फिर चाहे वे अंग्रेजी जलवायु से, नैसर्गिक दृश्यों से और साहित्य से घटिया दरजे के ही क्यों न हों। हमें और हमारे बच्चों को तो अपनी ही विरासत पर इमारत बनानी चाहिए अगर हम दूसरों की विरासत लेंगे, तो हमारी अपनी विरासत दरिद्र हो जाएगी सच तो यह है कि विदेशी सामग्री पर हम कभी उन्नति नहीं कर सकते। मैं तो चाहता हूं कि राष्ट्र न केवल अंग्रेजी भाषा का बल्कि संसार की अन्य भाषाओं की भंडार भी अपनी ही देश भाषाओं में संचित करे। रवीन्द्रनाथ की अनुपम कृतियों का सौंदर्य जानने के लिए मुझे बंगाली पढ़ने की कोई जरूरत नहीं, क्योंकि सुन्दर अनुवादों के द्वारा मैं उसे पा सकता हूं। इसी तरह टालस्टाय की संक्षिप्त कहानियों की कदर करने के लिए गुजराती लड़के-लड़कियों को रूसी भाषा पढ़ने की कोई जरूरत नहीं, क्योंकि अच्छे अनुवादों के जरिए वे उन्हें पढ़ सकते हैं। अंग्रेजों को इस बात का गर्व है कि संचार की सर्वोत्तम या साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित होने के एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर सरल अंग्रेजी में उनके हाथों में आ पहुंचती है। ऐसी हालत में शेक्सपीयर और मिल्टन के सर्वोत्तम विचारों और रचनाओं के लिए मुझे अंग्रेजी पढ़ने की जरूरत क्यों हो।

बापू प्राथमिक शिक्षा पर बड़ा जोर देते थे उनका कहना था कि भारत के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के सिद्धान्त में मेरा दृढ़ विश्वास है। मैं यह भी मानता हूं कि इस लक्ष्य को सिद्ध करने का एक मात्र मार्ग यह है कि हम बालकों को कोई उपयोगी उद्योग सिखाएं और उसके द्वारा उनकी शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का विकास सोचें। कोई ऐसा न माने कि शिक्षा के क्षेत्र में आर्थिक दृष्टि से विचारना निरा बनियापन है या ऐसे विचार का शिक्षा के क्षेत्र में कोई स्थान ही नहीं है। सच्चा अर्थशास्त्र कभी उच्चतम नैतिक सिद्धांत के संघर्ष में नहीं आता, जैसे कि सच्चा नीतिशास्त्र अच्छा अर्थशास्त्र भी होना चाहिए।

उच्च शिक्षा के बापू विरोधी नहीं थे, पर संभल-संभल कर कदम उठाने के पक्ष में जरूर थे। हरिजन सेवक के नौ जुलाई उन्नीस सौ अड़तीस के अंक में बापू ने इस बारे में लिखा था मैं उच्च शिक्षा का विरोधी नहीं हूं। लेकिन उस उच्च शिक्षा का मैं जरूर विरोधी हूं, जो कि आज इस देश में दी जा रही है। मेरी योजना में सबसे अधिक संख्या में और अधिक अच्छे पुस्तकालय होंगे, अधिक संख्या में और अधिक अच्छी प्रयोगशालाएं होंगी तथा अधिक अच्छी अनुसन्धान शालाएं होंगी। मेरी योजना में हमारे पास ऐसे रसायनशास्त्रियों, इंजीनियरों तथा अन्य विषयों के विशेषज्ञों का एक बड़ी फौज होगी, जो राष्ट्र के सच्चे सेवक होंगे और उस जनता की दिनोंदिन बढ़ने वाली विविध प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेंगे, जो अपने अधिकारों तथा आवश्यकताओं के बारे में अधिकाधिक जाग्रत बनती जा रही है। और ये विशेषज्ञ अंग्रेजी भाषा नहीं बोलेंगे। वे लोग जो ज्ञान प्राप्त करेंगे वह सब लोगों की सामूहिक संपत्ति होगी।

बापू ने साफ-साफ लिखा, अब मैं अपने उन निष्कर्षों को बता दूं, जिन पर मैं कई बरसों से पहुंच चुका हूं, और जब भी कभी मौका मिला है उन्हें अमल में लाने की मैंने कोशिश की है। उन्होंने आगे लिखा :—

1. दुनियां में प्राप्त हो सकने वाली ऊंची से ऊंची शिक्षा का भी म विरोधी नहीं हूं।

2. राज्य को, जहां भी इस शिक्षा का निश्चित उपयोग हो, वहां इसका खर्च उसे उठाना चाहिए।

3. मैं राज्य के सामान्य राजस्व से किसी भी तरह की उच्च शिक्षा का खर्च चलाने के विरुद्ध हूं।

4. मेरा यह पक्का विश्वास है कि हमारे कालेजों में जो विशाल मात्रा में तथाकथित शिक्षा दी जाती है, वह सब

बिल्कुल व्यर्थ है और उसका परिणाम शिक्षित वर्गों की बेकारी के रूप में हमारे सामने आया है। यही नहीं, बल्कि जिन लड़के-लड़कियों को हमारे कालेजों की चक्की में पिसने का दुर्भाग्य प्राप्त हुआ है, उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को भी इस शिक्षा ने चौपट कर दिया है।

5. विदेशी भाषा के माध्यम ने, जिसके जरिए भारत में उच्च शिक्षा दी जाती है, हमारे राष्ट्र को अपार बौद्धिक और नैतिक हानि पहुंचाई है। अभी हम अपने इस जमाने के इतने पास हैं कि इस नुकसान की भयंकरता का ठीक अन्दाज नहीं लगा सकते। इसके सिवा, ऐसी शिक्षा पाने वाले हमीं लोगों को इसके शिकार और न्यायाधीश दोनों बनना है, जो कि लगभग असंभव काम है।

शिक्षा के दायरे के बारे में बापू के विचार उदार थे। बापू संगीत की शिक्षा, विज्ञानों की शिक्षा यहां तक काम-विज्ञान की शिक्षा के भी समर्थक थे पर एक दायरे में। संगीत शिक्षा के बारे में बापू ने लिखा है कि प्राथमिक शिक्षा के पाठ्य-क्रम में संगीत की शिक्षा को स्थान मिलना चाहिए। मैं इस सूचना का समर्थन करता हूं। बच्चे के हाथ को शिक्षा देने की जितनी जरूरत है उतनी ही जरूरत उसके गले को शिक्षा देने की है। लड़के-लड़कियों के भीतर जो अच्छाइयां भरी रहती हैं उन्हें बाहर लाने के लिए तथा शिक्षा में उनकी दिलचस्पी पैदा करने के लिए कवायद, उद्योग, चित्रकारी और संगीत उन्हें साथ-साथ सिखाए जाने चाहिए।

इसी प्रकार विज्ञान की शिक्षा के बारे में उन्होंने लिखा था कि "मैं विभिन्न विज्ञानों से शिक्षा को महत्वपूर्ण मानता हूं। हमारे बालक रसायनशास्त्र और भौतिक विज्ञान की जितनी भी शिक्षा ग्रहण करें उतनी थोड़ी ही है।"

काम विज्ञान की शिक्षा के बारे में बापू ने कहा कि जिस काम-विज्ञान की शिक्षा के पक्ष में मैं हूं, उसका लक्ष्य यही होना चाहिए कि इस विकार पर विजय प्राप्त की जाए और उसका दुरुपयोग हो। ऐसी शिक्षा का स्वभावतः यह उपयोग होना चाहिए कि वह बच्चों के दिलों में मनुष्य और पशु के बीच का फर्क अच्छी तरह बैठा दे। बुद्धि मनुष्य में भावना को जाग्रत करती है और उसे रास्ता दिखाती है। पशु में आस्था सुप्तावस्था में रहती है। हृदय को जाग्रत करने का अर्थ है खोई हुई आत्मा को जाग्रत करना, बुद्धि को जाग्रत करना और बुराई-भलाई का विवेक पैदा करना।

आज तो हमारे सारे वातावरण का—हमारे पढ़ने, हमारे सोचने और हमारे सामाजिक व्यवहार का—सामान्य हेतु कामेच्छा की पूर्ति करना होता है। इस बात को तोड़कर बाहर निकलना आसान काम नहीं है। परन्तु यह एक ऐसा काम है, जिसके लिए हमें ऊंचे से ऊंचा प्रयत्न करना चाहिए।

बापू के शिक्षा सम्बन्धी विचारों को लागू करने के लिए वर्तमान में दी जा रही औपचारिक शिक्षा की इस चलती लीक से हट कर कदम उठाना आवश्यक है। जितना शीघ्र यह हो सके, उतना ही अच्छा होगा। ☐

दहेज प्रिय

कुलदीप जैन

जब लड़के का पिता भी तीन दिन तक वापिस नहीं आया तो लड़के की मां को बहुत चिन्ता हुई। स्वयं लड़का और उसके मामा का हश्र भी यही हुआ था। बड़ी हिचक के साथ वह स्वयं जाने को तैयार हुई। वह इस बात के हक में नहीं थी कि पुलिस में तीन व्यक्तियों के गायब होने की रिपोर्ट लिखाई जाए।

जब लड़के की मां ससुराल पहुंची तो उसकी बहू बर्तन मांझ रही थी। वह सोच रही थी कि उसी के कारण यह सब काण्ड हुआ है। अगर वह दहेज कम लाने के चक्कर में रोज-रोज बहू को अपमानित न करती तो घर की सुखी गाड़ी आराम से चलती रहती।

बहू सास को देखते ही उठी और उसके पैर छुए। "जुग-जुग जीओ बेटी। क्या तेरे ससुर यहां आए थे?"

इस पर बहू कुछ नहीं बोली तो सास की चिन्ता बढ़ गई। उसने कहा——"रवि और उसका मामा भी दो हफ्ते से घर नहीं पहुंचे हैं। हे भगवान क्या होगा!"

तभी लड़की का पिता घर में दाखिल हुआ और उसने अपनी लड़की की सास को देखते ही खूंखार मूड बना लिया। समधिन शर्म के मारे नीचे देखने लगी।

"समधिन जी, जली लकड़ी से मेरी प्यारी लड़की पर आप भी मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा देतीं, कम से कम इस बेचारी पर रोज़-रोज़ तो अत्याचार न होते।"

इस पर लड़की की सास कुछ न कह सकी तो समधी बोला——"आओ मैं तुम्हें दिखाता हूं, तुम्हारा लड़का कहां है?"

कोठरी का द्वार खोल दिया गया। लड़की की सास ने देखा तीन कृशकाय प्राणी धरती पर बिछी दरी पर सो रहे थे। सास सब कुछ समझ गयी। उन लोगों के चेहरों पर आतंक के चिह्न मौजूद थे।

लड़की की सास समधी के कदमों में गिरकर गिड़गिड़ाने लगी——"हमें माफ कर दीजिए, हमें दहेज नहीं चाहिए, हमें तो बस हमारी बहू वापिस कर दीजिए। हम अपने किए को भुगत चुके हैं।" यह सुनते ही समधी के चेहरे पर व्यंग्य भरी मुस्कान फैल गयी। ●

शिष्टाचार ही मानवीय जीवन का मापदण्ड

ऋषि मोहन श्रीवास्तव

'शिष्टाचार' एक ऐसा दर्पण कहा जा सकता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व के दर्शन सहज में ही हो जाते हैं, सिर्फ शिष्टाचार ही मनुष्य का प्रथम परिचय समाज से करवाता है।

परिभाषिक तौर पर शिष्टाचार व्यवहार की वह रीति नीति है जिसमें व्यक्ति और समाज की आन्तरिक सभ्यता और संस्कृति के दर्शन होते हैं। परस्पर बातचीत सम्बोधन से लेकर दूसरों की सेवा, त्याग, आदरभाव सभी शिष्टाचार के ही रूप हैं, शिष्टाचार हमारे आचरण और व्यवहार का एक नैतिक मापदण्ड है जिस पर ही संस्कृति और सभ्यता की मंजिल खड़ी होती है। एक दूसरे के प्रति हमारी भावनाएं, सहानुभूति, सहयोग आदि शिष्टाचार के ही मूलाभार है।

शिष्टाचार का क्षेत्र काफी बड़ा है समाज में जहां भी मनुष्य का मनुष्य से सम्पर्क होता है, वहां शिष्टाचार की अवश्य आवश्यकता होती है। घर के छोटे से लेकर हर बड़े सदस्य तक हमें शिष्टाचार की आवश्यकता होती है।

सद्व्यवहार, समाचार आदि शिष्टाचार के ही रूप हैं, शिष्टाचारी मन कभी भी किसी के मन को दुखी नहीं करता, न ही वह किसी के लिए दुर्वचन बोलता है, वह कभी भी ऐसा कोई कार्य नहीं करता जिससे किसी का मन दुखे। विनय, मधुरता का व्यवहार ही शिष्टाचार जीवन का अंग होता है।

'शिष्टाचार' एक ऐसा सद्गुण है जिसके लिए किसी उच्च खानदान या विशेष परिस्थितियों में जन्म लेने की जरूरत नहीं होती। इसके लिए आवश्यकता होती है सिर्फ अभ्यास और आचरण की। इन दोनों के माध्यम से शिष्टाचार को अपने अन्दर पैदा किया जा सकता है।

वर्तमान स्थिति ऐसी हो रही है, जहां चारों तरफ अशिष्टता की व्यापक वृद्धि हो रही है, लोगों के व्यवहार में मधुरता का लोप होने के साथ उच्छृंखलता बढ़ती जा रही है। यह न केवल समाज के लिए अभिशाप है बल्कि देश के लिए भी इससे नुकसान है। दूसरे के सम्मान और आदर का तनिक भी ध्यान न रख कर अपने स्वार्थ के लिए दूसरों के साथ मनमाना व्यवहार ही अशिष्टता है। दूसरों की भावनाओं का परित्याग, उनका मजाक उड़ाना, व्यंग बाण चलाना, दूसरों के प्रत्येक कार्य में कमी निकालना। अशिष्टता के साकार रूप हैं।

मां बाप या अभिभावकों की उपेक्षा एवं उनके व्यवहार के कारण बच्चे भी गलत आचरण के शिकार हो जाते हैं वे गाली का प्रयोग करना एवं अश्लील हरकतों को अपने जीवन में उतार लेते हैं। घर हो या कोई सार्वजनिक स्थल कुछ लोग अशिष्ट व्यवहार आपसी तौर पर करते हुए देखे जा सकते हैं। सभा-स्थलों, सिनेमा या सफर के दौरान लोगों को अशिष्ट व्यवहार करते हुए देखा जा सकता है। गुरुओं एवं वृद्धजनों के सम्मान-आदर उन्हें प्रणाम करने, पैर छूने की परम्पराएं धीरे-धीरे दम तोड़ती जा रही हैं। आज के शिक्षित लोग इन सब बातों में अपना अपमान समझते हैं।

अशिष्टता मानवीय जीवन के लिए एक बड़ा अभिशाप है। समाज और देश में बढ़ती हुई अशिष्टता हर किसी के लिए एक कलंक है। यह असभ्यता एवं पिछड़ेपन की निशानी है। जबकि शिष्टता हमारी सभ्यता एवं संस्कृति का एक दर्पण होती है।

आज इस बात की आवश्यकता है कि सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन में बढ़ती हुई अशिष्टता को रोकने का प्रयास किया जाए। परस्पर व्यवहार, बातचीत और रहन-सहन में शिष्टाचार के सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए। तभी हम अपनी जाति समाज और देश का विकास उचित रूप से करने में समर्थ होंगे। ●

16, वर्मा लेन, दतिया (म० प्र०)

जब तक आदमी अपने आप को सुखी नहीं समझता तब तक सुखी नहीं हो सकता।

मध्य प्रदेश का ग्रामांचल

सूखे चेहरों पर रेशमी मुस्कान

जगमोहन लाल माथुर

1 अक्तूबर 1980 से देश के 5000 से अधिक सभी विकास खंडों में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम शुरू किया गया है जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों के निर्धनतम परिवारों को ऊपर उठाने में रोजगार के नए अवसर प्राप्त करने में और वर्तमान काम धंधों को अधिक लाभप्रद बनाने में विविध योजनाओं के जरिए सहायता करना है। प्रस्तुत लेख मध्य प्रदेश के इन्दौर, देवास, सीहोर और होशंगाबाद जिलों की यात्रा के दौरान प्राप्त अनुभव और जानकारी पर आधारित है।

रेशम के कीड़े पालने से गरीब परिवारों को कितना लाभ पहुंच सकता है, इसका मुझे प्रत्यक्ष अनुभव पिछले दिनों मध्य प्रदेश में इन्दौर के पास देपालपुर गांव की यात्रा से हुआ। कौशल्या और आसपास के गांवों की ग्यारह अन्य महिलाओं ने एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत मध्य प्रदेश टेक्सटाइल कारपोरेशन के सेरीकल्चर फार्म पर पिछली जनवरी में रेशम कीट पालन की दो महीने की ट्रेनिंग ली थी और जुलाई से सितम्बर तक के 3 महीनों में उसने कोसा बेचकर 550 रु० प्राप्त किए। इस प्रकार हर महीने करीब 180 रु० की उसे अतिरिक्त आमदनी हुई। ट्रेनिंग के पूर्व कौशल्या और अन्य गरीब महिलाओं के परिवारों की आमदनी 100 रु० माहवार से कम थी और अब करीब 240 रु० प्रतिमास हो गई है। 20 अन्य महिलाएं इन दिनों प्रशिक्षण ले रही हैं। फार्म से इन महिलाओं को शैशव अवस्था के रेशम कीट दिए जाते हैं और शहतूत की कटी हुई पत्तियां पर छबड़ी में उन्हें पाला जाता है। 15 दिनों के भीतर रेशम का कीड़ा घोंधा की शक्ल का "कोसा" तैयार कर लेता है। इन्हें सेरीकल्चर फार्म पर बेचा जा सकता है। इस समय सेरीकल्चर वाले कीमत में से पत्तियों के दाम काट लेते हैं। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत इस प्रकार प्रशिक्षित महिलाओं को 3 हजार रु० की वित्तीय सहायता प्राप्त होती है जिनमें से 2500 रु० शेड या छप्पर के लिए और 500 रु० कीट पालन संबंधी उपकरण आदि खरीदने के लिए होते हैं। इस राशि का 2/3 भाग बैंक ऋण के रूप में और 1/3 भाग ग्रामीण विकास कार्यक्रम सहायता अथवा सब्सिडी रूप में मिलता है।

देपालपुर विकास खंड में रेशम कीट पालन के अलावा अन्य कुटीर उद्योगों से भी गरीबों की हालत सुधारने के प्रयास किए गए हैं। एक ऐसा अन्य काम दरी की बुनाई है। 1980-81 वर्ष में 10 लोगों को दरी बुनने का प्रशिक्षण देकर 7 को बैंक से ऋण प्राप्त कराया गया और उन्होंने दरी बनाने का अपना कामधन्धा शुरू कर दिया है। इसी गांव में रहने वाले कुछ हरिजनों ने खजूर की पत्तियों से झाड़ू बनाने के काम को भी बढ़ा लिया है और इसमें उन्हें बैंक ऋण सहायक सिद्ध हुआ। देपालपुर में बनी झाड़ू अब गुजरात तक बिकने जाती हैं। देपालपुर के ही पास गोकुलपुर गांव में भी इसी प्रकार ग्रामीण एकीकृत कार्यक्रम के अंतर्गत निर्धनों को लाभान्वित किया है। कृषि व पशुपालन के अतिरिक्त अन्य प्रकार के कामधन्धों में भी लोगों को लगाया गया है। गोकुलपुर गांव में जहां एक हरिजन हेमा ने भैंस प्राप्त करके उसके दूध से काफी आमदनी बढ़ाने में सफल हुआ है वहां खलकू ने लुहारी का, हरलाल ने कुम्हारी का और वासुदेव ने नाई का कामधन्धा बढ़ाया है। गोकुलपुर गांव में कई स्त्रियों ने सिलाई का प्रशिक्षण लेकर अपने परिवार की आमदनी बढ़ाई है।

देपालपुर जैसे, मध्य प्रदेश में 459 विकास खंड हैं और समस्त देश में ऐसे 5011 विकास खंड हैं। 2 अक्तूबर, 1980 से देश के सभी विकास खंडों में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम लागू किया गया। हालांकि पिछले लगभग 10 वर्षों से छोटे और मझोले किसानों और अन्य गरीब लोगों के लाभ के लिए लघु कृषक या सीमान्त कृषक एजेंसी जैसे कार्यक्रम चलते रहे थे। पर इनमें से कोई भी कार्यक्रम कभी भी देश के सभी विकास खंडों में एक साथ लागू नहीं किया गया था और न ही कार्यक्रम का संचालन करते समय समस्त विकास खंडों के परिवारों का सर्वेक्षण करके

मध्य प्रदेश के इन्दौर जिले गोकुलपुर गांव में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत सिलाई का प्रशिक्षण प्राप्त एक ग्रामीण महिला ।

योजनाबद्ध तरीके से काम किया गया । नयी नीति के अनुसार देपालपुर विकास खंड में किए गए सर्वेक्षण से पता चला कि लगभग 6 हजार परिवार छोटे और सीमान्त किसान, कृषि मजदूर और ग्रामीण कारीगर हैं और इस प्रकार वे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम की परिधि में आते हैं । 1980-81 वर्ष में लगभग 300 परिवारों को विभिन्न कार्यक्रमों से लाभान्वित किया गया और इस साल 1981-82 की पहली छमाही में 130 परिवारों को भी विभिन्न कार्यक्रमों के अधीन सहायता पहुंचाई गई है ।

इन्दौर जिले में एक और अच्छी बात यह है कि बैंक और विकास कार्यों संबंधी विभिन्न एजेंसियों में पूरा सामंजस्य है । गरीबों को बैंकों से ऋण लेने में परेशानी न हो, इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में ही शिविर लगाए जाते हैं जिनमें बैंकों के अधिकारी, विकास विभाग के सभी संबंधित कर्मचारी और आवेदक एक स्थान पर एकत्र हो जाते हैं । आवेदकों की अर्जी पर वहीं विचार कर निर्णय लिया जाता है । और कहीं-कहीं बैंक ऋण की मंजूरी भी दे देता है । मैंने ऐसा ही एक शिविर अपनी इस यात्रा के दौरान सेवार विकास खंड में देखा जहां करीब एक घंटे के भीतर स्टेट बैंक ने 61 व्यक्तियों को एक लाख 12 हजार से अधिक का ऋण देने की स्वीकृति दी गई । वहां एकत्र व्यक्तियों में सभी प्रकार के लोग थे जिनमें हरिजन, विधवाएं तथा विकलांग शामिल हैं ।

पर इन्दौर में विभिन्न एजेंसियों में जिस प्रकार का तालमेल नजर आया वैसा सीहोर जिले में नहीं था । उस जिले के परियोजना अधिकारियों का यह कहना है कि उन्हें बैंक से पूरा सहयोग नहीं मिल रहा है । सीहोर पहले लघु कृषक विकास एजेंसी, भोपाल का अंग था । नए निर्णय के फलस्वरूप वह एक पृथक जिला ग्रामीण विकास एजेंसी बनाया गया है । इस जिले के विकास खंडों को 4 कलस्टरों में बांटकर 4 साल में कार्यक्रम पूरा करने की योजना तैयार कर ली गई है । पर काम की गति अभी धीमी है । भोपाल के समीप होने के कारण यहां सब्जी के लिए अच्छी संभावना है और इसका लाभ कुछ लघु-किसानों ने उठाया भी है । मैंने एक फार्म पिपलाई गांव के श्री भंवर जी का देखा है । वे 1970-71 तक किसी और के यहां कृषि मजदूरी करते थे अब साढ़े चार एकड़ के फार्म में तरह-तरह की सब्जियां और कुछ अनाज भी उगाने लगे हैं । 1974-75 में उन्हें लघु कृषक विकास एजेंसी के जरिए पम्पसेट और कुएं के लिए ऋण मिला था जिससे पूरे साल भर वे सिंचाई की व्यवस्था करने में सफल हुए हैं और लगभग पूरे साल में हेरफेर से 3 फसलें लेते हैं । वे सारा कर्जा चुका चुके हैं । इस तरह के एक किसान महेश प्रसाद राय हैं जिनके दो पढ़े-लिखे बेटे भी खेतीबाड़ी में हाथ बंटा रहे हैं । इनमें एक लड़का ग्रेजुएट है और दूसरा हायर सेकेण्डरी । इनमें से कोई भी शहर में नौकरी के लिए जाने को तैयार नहीं । क्योंकि उन्हें अपने खेत से काफी आमदनी होती है । महेश प्रसाद को भी यह सफलता कुंए पर बिजली चालित मोटर लगाकर लगातार सिंचाई की व्यवस्था करने से मिली है । हाल ही में उन्होंने केवल 5000 रु० की गोभी, 8000 रु० के टमाटर और 2900 रु० की अदरख बेची है ।

वे साल में इसी खेतीबाड़ी से करीब 12 हजार रु० की शुद्ध बचत कर लेते हैं।

कृषि, पशुपालन के अलावा सीहोर में ग्रामीण युवकों और महिलाओं को विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण देने का कार्य भी चल रहा है। महिलाओं में सिंचाई सीखने की लगन है तो कुछ लड़कों ने मोटर की वाइंडिंग का काम भी सीखा है। नर्मदा नदी के किनारे बसा बुदनीघाट गांव में कुछ लड़कों ने लकड़ी के खिलौने बनाने का काम भी सीखा है। अन्य कुछ लड़के केन्द्रीय सरकार के ट्रैक्टर प्रशिक्षण व जांच केन्द्र, बुदनी में विभिन्न प्रकार के कामों का प्रशिक्षण ले रहे हैं।

इन्दौर व सीहोर जिलों के बीच स्थित देवास जिले को मुख्य सफलता विकलांग लोगों के पुनर्स्थापन में मिली है। संभवतः यह पहला जिला है जहां अंतर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष शुरू होने से पूर्व सर्वेक्षण कर यह पता लगाया गया कि कितने विकलांग हैं और उन्हें किस प्रकार की सहायता की जरूरत है। कृत्रिम अंग और सहायक उपकरण देने के अलावा इनमें से कुछ विकलांगों को अपने कामधंधे शुरू करने के लिए भी सहायता दी गई है। देवास जिले में 1980-81 में ग्रामीण युवक स्व-रोजगार योजना के अंतर्गत विभिन्न कामधन्धों का प्रशिक्षण प्राप्त किया जबकि 1981-82 वर्ष में 30 सितम्बर तक 79 युवकों ने प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद अपना कामधंधा शुरु कर दिया है। इसमें सिलाई का काम मोटर रीवाइन्डिंग, लुहार, खाती आदि का काम भी शामिल है। बैंकों ने गरीबों को मदद देने में योग दिया है। देवास से कोई 40 कि० मी० दूर नेवरी में राधाबाई ने एक हजार रु० के ऋण से लाख की चूड़ियां बनाने का काम काफी बढ़ा लिया है। अब वह 300 रु० प्रति-मास की चूड़ियां बेचती है और बेचने के काम में उसका पति सहायता करता है जो गांव-गांव व हाट-बाजार जाता है। इसी गांव के कैलाश ने भी पशुओं के लिए रंग-बिरंगी डोरियों वाली मालाएं बनाने का काम बढ़ाया। इस तरह की मालाएं यहां दीवाली के दिनों में खूब बिकती हैं। अरलावाड़ा में खाती का काम करने वाला रमेश चन्द्र पहले परम्परागत औजारों से 8 दिन में गाड़ी के दो पहिए बनाता था अब बैंक से ऋण लेकर आरे व खराद की मशीन लगा ली है और 4 दिन में दो पहिए बना लेता है। शिव नारायण ने तेल की धानी का काम जमा लिया है। वह रोज 60 किलो तेल निकालता है। देवास में संभवतः सर्वाधिक महत्व का काम सिया गांव में लगा है जहां 50 प्रतिशत हरिजन हैं। राजकीय खादी मंडल द्वारा संचालित एक प्रशिक्षण केन्द्र में पोलिएस्टर की कताई का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। 16 हरिजन स्त्रियां यह काम सीख रही हैं जिन्हें 8 घंटे काम करके 3 से $3\frac{1}{2}$ रु० के बीच पैसे मिलते हैं। यह उनके लिए बहुत सहायक है हालांकि वे इसे बढ़वाना चाहती हैं।

मध्य प्रदेश में विकास कार्य के अंतर्गत होशंगाबाद जिले में एक दिलचस्प प्रयोग किया जा रहा है। इटारसी से कोई 8 कि० मी० दूर कीरतपुर गांव में 14 किसान दम्पतियों को प्रशिक्षण के लिए लाया गया है जिन्हें 3 महीने वहीं ठहराकर पशुपालन की उन्नत

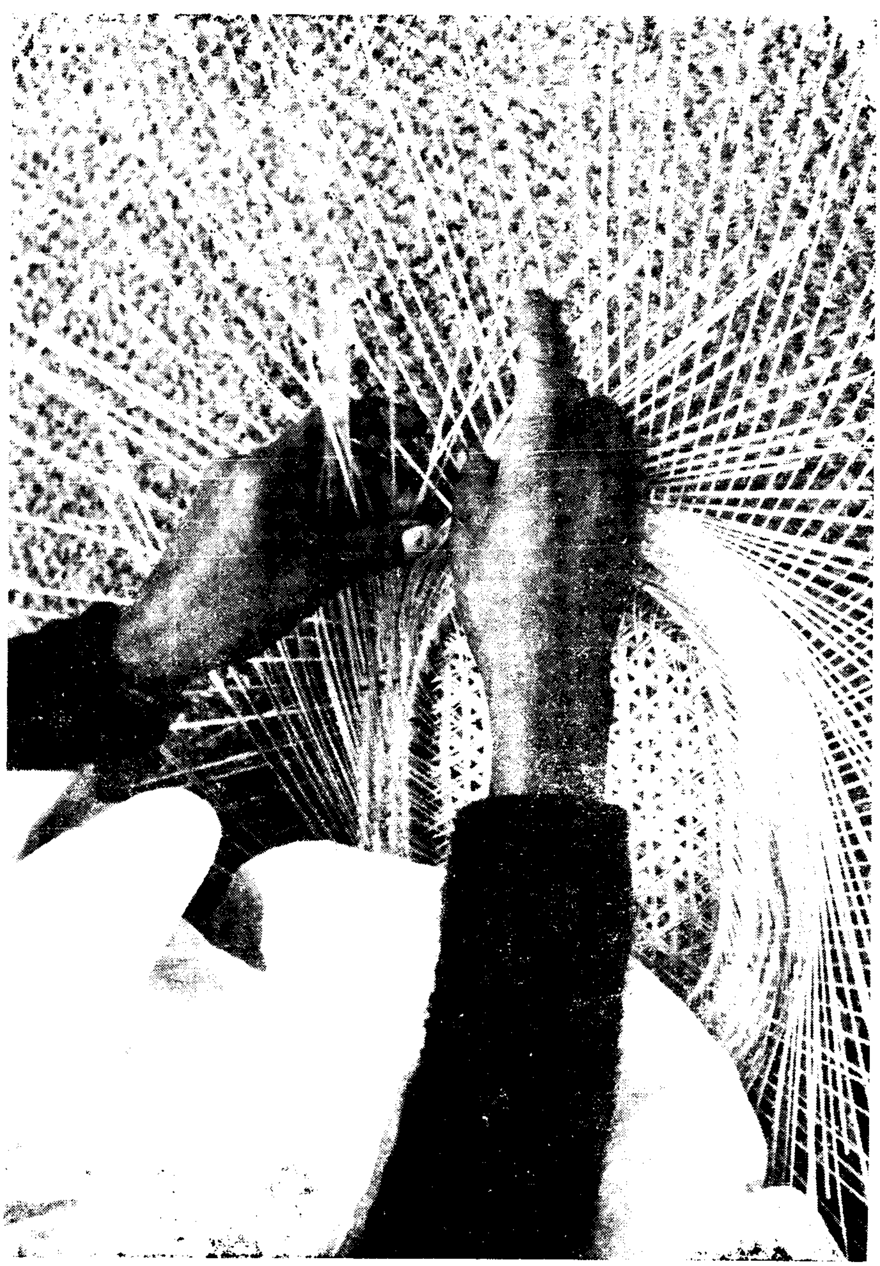

कितनी कुशलता से टोकरी बुनी जा रही है।

मध्य प्रदेश के देवास जिले के सिया गांव में पोलिएस्टर सूत की कताई। ये हरिजन महिलाएं कितनी दत्तचित्त होकर सूत की कताई कर रही हैं।

विधियां आदि सिखायी जा रही हैं। स्त्रियों और पुरुषों के एक साथ आकर नयी-नयी चीजें सिखाने और बाद में उसे उन्हें अपने जीवन में आजमाने का अवसर देने का यह एक अच्छा रास्ता निकाला गया है। इन लोगों को 5 रु० प्रति व्यक्ति के हिसाब से पैसा दिया जा रहा है। प्रशिक्षण समाप्त करने के बाद उन्हें बकरी खरीदने के लिए ऋण दिलाया जाएगा।

इन्हीं दम्पतियों में से एक मुझे मेहताब और उसकी पत्नी लीला मिली जिन्होंने जीवन में पहली बार रेलगाड़ी देखी और रेल में सवार होकर इटारसी तक आए। मुझे परियोजना अधिकारी ने बताया कि 12 दम्पतियों का एक और दल पहले इसी प्रकार प्रशिक्षित किया जा चुका है। अब उन्हें बकरियां दिला दी गई हैं और इनसे होने वाली अतिरिक्त आमदनी से वे प्रसन्न हैं।

देवास से कुछ दूर जामगौद गांव में उन्नति के लिए ग्रामवासियों का असीम उत्साह और कटिबद्धता की झलक मिलती है। यह मध्य प्रदेश का ग्रामोदय गांव है। राज्य में 1979-80 से सर्वांगीण विकास के लिए हर विकास खण्ड में कम से कम एक गांव ऐसा चुना गया है। जामगौद में स्कूल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, बिजली, पानी, सड़क, सहकारिता आदि सुविधाएं हैं। वैसे तो पूरे मध्य प्रदेश में सोयाबीन की खेती में उल्लेखनीय सफलता मिली है पर इस गांव में सोयाबीन उत्पादकों की सहकारी समिति कार्यशील है जिसके 80 सदस्य हैं। साल में 1600-1700 क्विंटल फसल लेते हैं। इस गांव में भैंसों व बकरियों के जरिए गरीब परिवारों की आमदनी बढ़ी है और कुछ कुएं व विद्युतपम्प के लिए ऋण दिए गए हैं। वनों का विकास करने तथा पर्यावरण का संतुलन बनाए रखने के लिए राज्य में हरियाली प्रोजेक्ट शुरू की गई है जिसके अंतर्गत हर विकास खंड में दो हेक्टेयर क्षेत्र में पौधे लगाए हैं। पौधों का चुनाव करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि वे फल, चारा, ईंधन, भोजन या रेशा उपलब्ध कराने में भी सहायक हों। देपालपुर के पास इसी उद्देश्य के लिए एक खण्ड में 1200 से अधिक पौधे लगाए गए हैं जिनमें आम, इमली, आंवला, बबूल आदि शामिल हैं। कुछ वर्षों में ये पौधे सुन्दर कुंज का रूप ले लेंगे।

चाहे कीरतपुर हो, देपालपुर हो, सभी जगह चल रहे कार्यक्रमों का ध्येय समाज के निर्धनतम परिवारों की हालत सुधारना है। छठी पंचवर्षीय योजना अवधि में हर विकास खंड के 600 परिवारों को विभिन्न प्रकार की सहायता दी जाएगी और इस प्रकार छठी योजना के अंत तक डेढ़ करोड़ परिवारों को बेहद गरीबी की स्थिति से उबारने का प्रयास होता रहा है। केन्द्र द्वारा छठी योजना में ग्रामीण पुनर्निर्माण के लिए 2542 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है जो पांचवीं योजना राशि से 350 प्रतिशत अधिक है। केन्द्र ने हर विकास खंड के लिए पांच वर्ष में 35 लाख रु० का प्रावधान रखा है। ●

हमारी सम्पदा हमारे वन

हम भाषायी दासता से कब मुक्त होंगे ?

डा० मोती बाबू

इंग्लैण्ड की सरकार द्वारा की गई व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रमण्डल के विभिन्न देशों के विधि अधिकारी यूरोपियन कम्युनिटी की विधि-व्यवस्था के अध्ययन के लिए स्ट्रेसबर्ग (फ्रांस) के एक होटल में ठहरे हुए थे । व्यवस्था एवं मार्ग-दर्शन के लिए इंग्लैंड के भी कुछ उच्च अधिकारी साथ थे । सभी अंग्रेजी भाषा के अभ्यस्त थे और फ्रेंच भाषा से अनभिज्ञ। किन्तु मुझे कुछ फ्रेंच आती थी । भोजन की सारी व्यवस्था होटल में ही थी । होटल कर्मचारियों में एक महिला हम लोगों को विशेष सत्कार एवं चाव के साथ भोजन कराती थी । किन्तु वह प्रयोग एक मात्र फ्रेंच भाषा का करती थी । अतः जब कोई किसी भोज्य पदार्थ की मांग अंग्रेजी में करता तो वह मुझे आकर फ्रेंच में पूछती —ये महानुभाव क्या चाहते हैं ? मैं एक-दो फ्रेंच शब्दों में बता देता। यह क्रम कई दिन तक चलता रहा । एक दिन उस महिला से फ्रेंच में बात करते समय मैं अभ्यासवश एवं अनायास एक वाक्य अंग्रेजी में बोल गया । मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उस महिला ने अंग्रेजी में ही उत्तर दे दिया । फिर भी इस आशंका से कि कहीं कोई गलत-फहमी न हो जाए, मैंने उस समय भाषा का प्रश्न नहीं उठाया तथा आगे बात फ्रेंच में ही की ।

दूसरे दिन दोपहर के भोजन के समय वही नित्यक्रम फिर आरम्भ हुआ । हमारे एक साथी के चावल की मांग अंग्रेजी में करने पर उस महिला ने मुझसे फ्रेंच में पूछा—"ये महानुभाव क्या चाहते हैं ?" मैंने फ्रेंच में कहा—"कल शाम आपने मेरा एक अंग्रेजी का वाक्य समझा ही नहीं था, अपितु उसका उत्तर भी अंग्रेजी में दिया था, फिर नित्यप्रति इस ड्रामा का अभिप्राय क्या है ?" "ये महानभाव फ्रेंच क्यों नहीं बोलते ?"

मैंने पूछा—"क्या एक-आध सप्ताह के लिए फ्रेंच में ठहरने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा करना उचित है कि वह फ्रेंच भाषा सीखे ?"

उसने उत्तर दिया—"ये यहां आकर न अपनी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं, न इस देश की भाषा का । ये तो तीसरे देश की भाषा का प्रयोग कर रहे हैं, इसका क्या औचित्य है ?"

मैंने कहा—"ये इसी के अभ्यस्त हैं। फ्रेंच सीखना इनके लिए क्यों जरूरी हो ?"

उसने कहा—"यहां भोजन सामग्री में एक दर्जन से अधिक व्यंजन नहीं हैं । इन्होंने इतनी अंग्रेजी सीखी, क्या हमारी भाषा के बारह शब्द भी नहीं जान सकते ? आप भी तो बहुत थोड़ी फ्रेंच जानते हैं, किन्तु आपने प्रयास किया ।" यहां तक बात फ्रेंच में हुई फिर उसने मेज पर हाथ मारते हुए चुनौती के स्वर में अंग्रेजी में कहा—"यदि ये महानुभाव फ्रेंच नहीं जानते तो मैं भी अंग्रेजी नहीं जानती ।"

एक होटल सेविका का इतने अंग्रेजी भाषी उच्च अधिकारियों की उपस्थिति में अपनी भाषा के विषय में इतना लगाव एवं आग्रह देखकर मैं दंग रह गया और अपने देश की स्थिति के विभिन्न चित्र मेरे नेत्रों के सामने तैरने लगे ।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के कई दशक बाद तक हम भाषाई गुलामी की जंजीर को अपनी उपलब्धि मानकर उसमें बंधे हुए हैं । हम बात तो राष्ट्रसंघ में हिन्दी के प्रयोग की करते हैं किन्तु हमारी अपनी केन्द्र सरकार, राज्य सरकारें तथा उच्च और उच्चतम न्यायालय अंग्रेजी का ही मूल भाषा के रूप में प्रयोग कर रहे हैं । विभिन्न भारतीय भाषा-भाषी अपनी-अपनी भाषा की बात तो बहुत करते हैं किन्तु राज-काज में अंग्रेजी का ही प्रयोग करते हैं ।

सरकार की तो बात ही क्या, गैर-सरकारी काम-काज में भी अंग्रेजी को अधिकाधिक अपनाया जा रहा है। देश के अन्दर भी जो व्यावसायिक कार्य पहले प्रायः अपनी भाषा में होते थे, वे भी अंग्रेजी में होने लगे हैं । जहां अपनी भाषा के प्रयोग का पूरा अवसर है, वहां भी अंग्रेजी का प्रयोग किया जाता है । पत्र-पत्रिका प्रायः अंग्रेजी की ही अपनाई जाती है । लोग गोष्ठियां तो अपनी-अपनी भाषा की करते हैं किन्तु कार्य रूप में योगदान अंग्रेजी के लिए करते हैं । और तो और, विवाह-शादी के निमंत्रण-पत्र तक अंग्रेजी में छपाए जाते हैं, जैसे शादी अंग्रेजी संतान की हो रही हो । दीपावली, ईद और नव-वर्ष की बधाईयां भेजी जाती हैं । ये कही "हार्दिक" जाती हैं किन्तु भेजी जाती हैं 'मानसिक दासता' की भाषा अंग्रेजी में । हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में भी भरमार अंग्रेजी के कार्डों की होती है । हम मानसिक दासता से इतने ग्रस्त हो गए हैं कि हृदय की बात भी विदेशी भाषा में करना पसन्द करते हैं ।

यह समझ में आने वाली बात है कि जब सम्बोधित व्यक्ति हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा न जानता हो और अंग्रेजी जानता हो, तो अंग्रेजी का प्रयोग कर लिया जाए । किन्तु यहां तो सभी

सम्बन्धित व्यक्तियों के हिन्दी जानने पर भी प्रयोग अंग्रेजी का किया जाता है। सम्भवतः यह मनोवृत्ति काम करती है कि भगवान ने हमें भले ही इस काले देश में पैदा कर दिया तथा गोरा रंग नहीं दिया, किन्तु हम हैं वस्तुतः उसी पाश्चात्य अभिजात्या से सम्पन्न।

यह हमारी मनोवृत्ति वही है जो चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी के इंग्लैंड में व्याप्त थी। अंग्रेजी तुच्छ या असम्य भाषा समझी जाती थी तथा सभ्यता एवं बड़प्पन के ज्ञापन के लिए लेटिन या फ्रेंच का प्रयोग किया जाता था। कन्याओं को सम्य एवं संस्कृत मानने के लिए उनका फ्रेंच भाषा का ज्ञान ही नहीं अपितु विद्यालयों में पढ़ना आवश्यक समझा जाता था। उस मानसिक दासता से ग्रस्त इंग्लैण्ड की गणना विश्व में कहीं नहीं थी। उसमें स्वभाषा प्रेम जागा तथा उन्होंने अंग्रेजी भाषा के तब पूर्णतया अविकसित होते हुए भी उसका प्रयोग अनिवार्य कर दिया। यही नहीं, न्यायलयों में फ्रेंच अथवा लेटिन भाषा का प्रयोग अपराध बना दिया गया। तत्पश्चात् मानसिक स्वतन्त्रता-प्राप्त इंगलैण्ड का इतिहास उसकी दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति का साक्षी है।

पता नहीं हम इस मानसिक गुलामी से कब छुटकारा पाएंगे तथा अपने मस्तिष्क का स्वतन्त्र रूप से प्रयोग कब कर सकेंगे। छोटी सी बात से ही संकेत मिल जाएगा। देखें कितने महानुभाव दीपावली, ईद और नव-वर्ष आदि पर्वों की बधाई भेजने के लिए उधार की भाषा का प्रयोग न करके अपनी भाषा का प्रयोग करते हैं।

अनमोल बचन

* धन्य है वह पुरुष जो काम करने से कभी पीछे नहीं हटता, भाग्य लक्ष्मी उसके घर की राह पूछती आती है।

महावीर स्वामी

* अशुद्ध लाभ तत्काल कुछ स्वादिष्ट लगते हैं किन्तु बाद में स्थायी कष्ट पहुंचाते हैं।

महात्मा बुद्ध

* धर्मात्मा मनुष्य सदा सत्य का पालन करता है और दानशील होता है।

वेद व्यास

* हो सकता है कि मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं, फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा।

वाल्तेयर

* लक्ष्य बिना परिश्रम निष्फल है, जैसे बिना दिशा या लंगर का जहाज निष्फल घूमता है।

जेम्स एलन

* अपनी पूंजी और धरोहर पैसा नहीं है; धैर्य, आस्था, सत्य और कुशलता है।

महात्मा गाँधी

* तम्बाकू केवल नुकसान ही नहीं पहुंचाता बल्कि शरीर और मन दोनों को निर्बल करता है।

विनोबा भावे

* जो श्रद्धा कभी बुझती नहीं है, मगर बढ़ती है, वह अनुभव का रूप लेती है।

काका कालेलकर

* जिन्हें अच्छी पुस्तकें पढ़ने का शौक है, वे एकान्त का समय कहीं भी काट सकते हैं।

स्वेट मार्डेन

* प्रार्थना दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति है, जो सभी मनष्यों को सुलभ है। प्रार्थना से आत्मविश्वास बढ़ता है।

डा० फेंक्लूब

* कार्य ही पूजा है।

कार्लाइल

* असफलता की कल्पना करना व अपने को हीन, तुच्छ व क्षुद्र समझना ही आत्मविश्वास को समाप्त करना है।

अज्ञात

* समय एक प्रकार का अमूल्य धन है। नष्ट किया हुआ भौतिक धन पुनः प्राप्त हो सकता है पर नष्ट किया हुआ समय पुनः प्राप्त नहीं हो सकता।

थामस गोये

* आदमी अपना दुख हँसकर भूल जाता है, रोकर बढ़ाता है।

अज्ञात

प्रस्तोता : श्याम मनोहर व्यास
प्राचार्य
राजकीय सैकण्डरी विद्यालय
भानदा (उदयपुर)

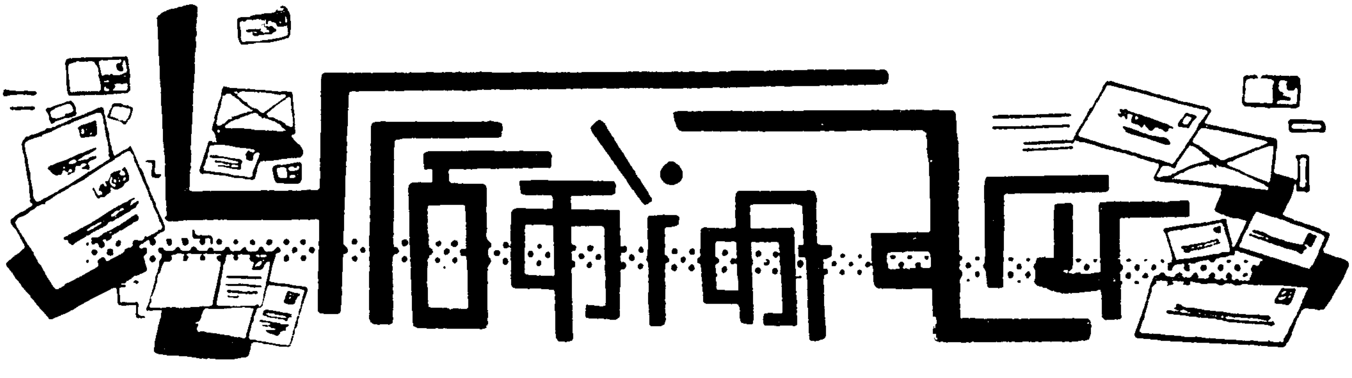

ग्रामोत्थान के लिए कुछ महत्वपूर्ण सुझाव ✳ कर्ण सिंह गौतम

यह तो नहीं कहा जा सकता कि ग्रामोत्थान के लिए स्वतंत्रता के बाद कुछ नहीं किया गया। सरकार की ओर से अनेक ठोस कार्य-ग्रामोत्थान के लिए किए गए हैं। दूर-दूर तक ग्रामीण अंचल को सड़क तथा रेल मार्गों से जोड़ना, विद्युत प्रकाश, किसानों के लिए कृषि उत्पादन वृद्धि संबंधी सुविधाएं, शिक्षा का प्रसार तथा ग्रामीण क्षेत्रों के आस-पास के कस्बों का औद्योगीकरण और उनमें लाखों ग्रामीण युवकों को कार्य मिलना अपने आप में ऐसी उपलब्धियां हैं जिनको भुलाया नहीं जा सकता। फिर भी देश को स्वतंत्र हुए लगभग 35 वर्ष हो गए हैं। इस अवधि को देखते हुए देश का जागरुक नागरिक यह सोचने पर विवश हो गया है कि राष्ट्रोत्थान जिस सीमा तक होना चाहिए था, हुआ नहीं। योजना के लक्ष्यों की दृष्टि से हमारी सरकार भी यही प्रयास करती है कि ग्रामीण विकास के लिए अधिक से अधिक धन का प्रावधान किया जाए। यह धन खर्च भी हो जाता है परन्तु गांव में इतने लम्बे समय के बाद जो विकास दिखाई देना चाहिए था, वह दिखाई नहीं दिया। जो सुविधाएं नगर में रहने वालों को मिल रही हैं, गांववासियों को उनके मुकाबले बहुत कम सुविधाएं प्राप्त हैं।

गांधी जी जैसी महान विभूतियों ने राष्ट्रोत्थान के विषय में यह विचार व्यक्त किया था कि "भारत गांवों में बसता है।" मानो यह गांधी जी की आत्मा की आवाज थी। परन्तु हमने गांधी जी के इस सत्य वचन की उपेक्षा कर दी। ऐसा लगता है कि हमारे कार्य करने के दृष्टिकोण में कुछ त्रुटियां अवश्य हो रही हैं। यह त्रुटियां किस स्तर पर हो रही हैं, यह नहीं कहा जा सकता। जो गांव देश के दूरस्थ अंचलों में स्थित हैं, उनके विकास की बात छोड़ दी जाए, तो भी बड़े-बड़े नगरों के निकट मुख्य सड़क मार्गों पर स्थित अनेक गांवों की दशा जनसुविधाओं की दृष्टि से अत्यन्त शोचनीय बनी हुई है। गांवों में कई समस्याएं तो मानवीय दृष्टि से ऐसी विकट हैं जिनके समाधान को अधिक से अधिक महत्व दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है। उदाहरण के लिए हम पेय-जल को ही लें। प्राचीनकाल से गांवों में पेयजल का साधन कुएं रहे हैं। इन कुओं का जल पीने के लिए शीतल और अधिक उपयोगी माना जाता रहा है परन्तु पिछले कुछ वर्षों से कुएं, बाढ़ की लपेट में आने के कारण, उनका जल दूषित हो गया है। जल में स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाले जीवाणु पैदा हो गए हैं अर्थात जल पीने योग्य नहीं रह गया है। गांवों में पेय जल की समस्या दिन-प्रतिदिन विकट रूप धारण करती जा रही है। गांवों की बहु-बेटियों को जल के लिए अनेक मुसीबतें उठानी पड़ रही हैं। आज भी उन्हें अपने सिरों पर कई मीलों से पानी ढोकर लाना पड़ता है।

यही दशा गांवों में शिक्षा की भी है। गांव के विद्यालय-भवनों की भी हालत अच्छी नहीं है। गांव के लोग स्वयं अपने कार्य में सहायक होते हैं। वे स्वयं धन एकत्रित करके विद्यालयों के भवनों का निर्माण करते हैं। परन्तु आज पंचायतों आदि के कार्यों की अच्छी प्रकार से देख-रेख न होने के कारण उनकी हालत बहुत खराब होती जा रही है। यही दशा गांवों में चिकित्सा, स्वच्छता और अन्य जन-सुविधाओं की है।

इस स्थिति का एक दर्दनाक पहलू यह भी है कि हमारे जो प्रतिनिधि ग्रामीण क्षेत्रों से चुनकर आते हैं, वे भी नगरों में ही रहने लगते हैं। वे ग्रामीण विकास की ओर ध्यान नहीं देते। गांधी जी ने जन सामान्य की सेवा का जो पाठ हमें पढ़ाया, हमने उस पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया। गांवों की भोली-भाली जनता का दुर्भाग्य यह है कि गांव के सभी वे लोग जो अच्छी योग्यता तथा शिक्षा प्राप्त करते हैं, गांव में रहना पसंद नहीं करते और गांव से पलायन करके नगर में जा बसते हैं। वे जन सामान्य की सेवा न करके अपने व्यक्तिगत सुख और आराम में पड़ जाते हैं। दूसरा मुख्य कारण गांव के पिछड़ेपन, जातिप्रथा और एक दूसरे को हीन समझना है। इसी हीन भावना के कारण कुछ लोग जीवन भर उभर नहीं पाते। गांव की उन्नति का विचार करते हुए गांधी जी ने एक बार कहा था कि गांव के लोग, जो अच्छी शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं जैसे डाक्टर, वकील, शिक्षक, प्रोफेसर या इंजीनियर—गांव छोड़कर नगर में जा बसते हैं। जब तक ये योग्यता प्राप्त लोग गांव में नहीं रहेंगे तब तक गांव उन्नति नहीं कर सकते। ये लोग यदि गांव में रहेंगे तो गांव में शिक्षा का स्तर ऊंचा करने, स्वच्छता, चिकित्सा तथा अन्य जन-सेवाओं पर ध्यान देंगे। लोगों के कल्याण

की आवाज उठाने में ये लोग बहुत ही सहायक सिद्ध होंगे। परन्तु पानी ऊपर से नीचे को बहता है, नीचे से ऊपर को नहीं, जब तक बड़े लोग गांव में नहीं रहते, तब तक गांव का उत्थान नहीं हो सकता।

गांवों की आवश्यकता

आज समय बदल गया है। अब गांवों के लोगों को भी वे सुविधाएं चाहिएं जो नगर के लोगों को प्राप्त हैं। गांवों म मकानों को ही ले लीजिए। कच्चे घर आजकल गांव के जीवन म भी व्यर्थ की बातें रह गई हैं। गांव में भी अब कच्चे मकान पक्कों म बदल रहे हैं। परन्तु मकान बनाने के लिए ग्रामीण भाईयों को नगर म दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं। इसी प्रकार गांव के लोगों को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नगर की ओर भागना पड़ता है। नगर में वस्तुएं या सुविधाएं प्राप्त करने के लिए नगर के नियम भी बड़े कठोर हैं। मकान के लिए चाहे सीमट की आवश्यकता हो या फिर बिवाह के लिए घी आदि की। इन सब बातों के लिए गांव के लोगों को नगर की ओर भागना पड़ता है। ये लोग अपने ग्राम विकास की ओर ध्यान नहीं दे पाते। गांव में एक और महत्वपूर्ण समस्या है गरीबी की। गांवों के लोग इतने गरीब हैं कि उनको अपना निर्वाह करने के लिए इधर-उधर भागना पड़ता है।

सुझाव

आस-पास के 5 से 10 गांव का एक यूनिट स्थापित कर दिया जाए। इन गांवों का एक केन्द्र स्थापित कर दिया जाए और वहां पर जन-सुविधाओं की समस्त एजेंसियां स्थापित कर दी जाएं। मकान बनाने हेतु सामग्री, विशेषकर सीमेंट, विवाह हेतु घी, बच्चों के लिए पढ़ने-लिखने की सामग्री, गांवों में शिक्षा का स्तर ऊंचा करने के लिए कालेज, प्रशिक्षण केन्द्र, खेती का उत्पादन बढ़ाने के लिए खाद व बीज का प्रबंध इस केन्द्र पर होना चाहिए। गांव के लोगों की मुख्य निराशा का कारण एक यह भी है कि सरकार से इन लोगों को जो सुविधाएं मिलती हैं, उनके लिए उनको दर-दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं परन्तु फिर भी इनको नगर से निराश होकर लौटना पड़ता है। गांव में बेरोजगारी जैसी बिकराल समस्याएं भी विद्यमान हैं। यही कारण है कि गांव के लोग नगर की ओर पलायन कर जाते हैं। इस प्रकार नगरों पर भी दिन-प्रतिदिन दबाव बढ़ता जा रहा है, जिसका परिणाम यह होता है कि नगर पर भी जन-सुविधाओं और अन्य समस्याओं का दबाव बढ़ जाता है।

गांव के लोगों की गरीबी दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि कुछ गांवों को एक यूनिट मानकर उद्योग धन्धे स्थापित किए जाएं। गांवों में उद्योगों की स्थापना से ग्रामीण युवकों में फैली बेरोजगारी को दूर करने में सहायता मिलेगी। गांव म पेय-जल की समस्या को दूर करने के लिए भी सरकार की ओर से प्रबंध होना चाहिए। इस प्रकार गांवों में उच्च-शिक्षा, स्वास्थ्य-सुविधा, पेय-जल, स्वच्छता का प्रबंध तथा वे सभी सुविधाएं जो नगर के लोगों को प्राप्त हैं, ग्रामवासियों को भी मिलनी चाहिएं। ग्राम विकास को पंचायतों या सरपंचों पर नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि अधिकतर पंचायतें राजनीति या जात-पात का शिकार हो जाती हैं। जिसके परिणाम-स्वरूप ग्राम विकास ठप्प पड़ जाता है। इसलिये सरकार को स्वयं गांव की ओर अधिक ध्यान देना होगा। इस प्रकार राष्ट्रोत्थान का कार्य समान रूप से हो सकेगा।

जनप्रतिनिधियों का कर्त्तव्य

निर्वाचित प्रतिनिधियों का कर्तव्य है कि वे गांवों की मूल समस्याओं का बराबर अध्ययन करते रहें, इन समस्याओं को सुलझाने की योजना अधिकारियों और सरकार के सम्मुख रखें और इनको लागू करवायें।

जहां प्रतिनिधि इन कार्यों के अंदर रुचि लेते हैं, वहां जन साधारण को सुविधाएं प्राप्त हो जाती हैं। वर्तमान में जन सेवा करने वाले कार्यकर्ताओं का अभाव है। किसी भी समाज में सामाजिक कार्यकर्ताओं का महत्वपूर्ण योगदान होता है। ग्रामोत्थान के महत्वपूर्ण कार्यों में ऐसे ही सामाजिक कार्यकर्ताओं की समितियां बना देनी चाहिएं। ग्राम समिति को पूर्ण मान्यता दी जाए और ग्रामोत्थान के लिए जो सुझाव ये समितियां दें, सरकार तथा अधिकारियों को इन सुझावों को अमल में लाना चाहिए।

ग्राम पंचायतों को अधिकार

ग्राम स्तर पर दिन-प्रतिदिन के कार्यों हेतु पंचायतों को अधिकार प्राप्त होने चाहिएं। उदाहरण के लिए स्वच्छता को ले लीजिए। ग्राम पंचायतों को सफाई कर्मचारी रखने का अधिकार होना चाहिए। सरकार की ओर से इन कर्मचारियों के वेतन का प्रबन्ध ऐसे ही होना चाहिए जसे नगरपालिका या नगर-निगम के अधिकारियों को होता है। इस प्रकार की सुविधा होने से गांवों का रूप निखर आएगा और लोगों को भी यह अनभव होगा कि सफाई जीवन की एक मूल आवश्यकता है। समय का तकाजा है कि बदलती हुई परि-स्थितियों म काम करने के तौर-तरीके भी बदलने की आवश्यकता है। प्राय: देखा गया है कि नगर में रहने वाला व्यक्ति गांव में रहने वाले व्यक्तियों पर हावी रहता है। इस प्रकार नगर का व्यक्ति जो सुविधा चाहता है, प्राप्त कर लेता है। परन्तु गांव के लोगों के भोलेपन का लाभ दूसरे लोग उठा जाते हैं। अत: कहा जा सकता है कि ग्रामवासी चारों ओर से शकंजों में कसा हुआ है।

गांधी जी का स्वप्न पूरा कैसे हो?

गांधी जी के स्वप्न को पूरा करने का समय अब आ गया है क्योंकि नगर म अब मानव का दम घुटने लगा है। वह अब गांव की ओर भागने लगा है। नगर का विकास पूर्ण होने के बाद उद्योगपति, धनी लोग तथा अधिकारी वर्ग अब गांव की ओर भागना चाहते हैं। अब उन्हें ग्रामवासियों की शरण में जाना पड़ रहा है। केवल आवश्यकता इस बात की है कि अधिकारी, निर्वाचित प्रतिनिधि तथा मन्त्रीगण कुर्सियां तथा अपना आराम और ठाट-बाट छोड़कर गांव की ओर बढ़ें और ग्रामोत्थान अभियान छेड़ दें। इस प्रकार जन-कल्याण का यह कार्य शीघ्र पूरा हो सकेगा। फिर न केवल सच्चा समाजवाद आएगा अपितु गांधी जी का स्वप्न भी पूरा हो सकेगा। ▭

कर्णसिंह गौतम
एच-316 सरोजिनी नगर,
नई दिल्ली-110023

कुष्ठ रोगियों के प्रति घृणा की नहीं, सहानुभूति की जरूरत

वैद्य रामरत्न पोपली

कुष्ठ रोग के संबंध में अनेक प्रकार के भ्रम हैं । कुष्ठ रोगी से बहुत ही घृणा की जाती है और इस रोग को महाछूत की बीमारी समझा जाता है । कुछ लोग इसे पाप जन्य रोग समझते हैं । दिसम्बर 1975 में संसार के सभी राष्ट्रों ने यह निर्णय किया था कि इस प्रकार के सभी भ्रम-संदेह दूर करके कुष्ठ रोगियों को स्वस्थ बनाने, इस बीमारी से उन्हें मुक्त कराने, समाज में इन सबको समुचित आदर का स्थान दिलाने तथा रहने के लिए मकान, खाने-पीने के प्रबन्ध के लिए रोजगार की उचित और स्थायी व्यवस्था, उनके बच्चों के लिए, उस समय तक, किसी अन्य स्थान पर निवास, खान-पान, कपड़ा, , शिक्षा आदि का संतोष-जनक प्रबन्ध, जब तक कि उनके माता या पिता अथवा संरक्षक, कुष्ठ रोग से मक्त होकर रोग की छूत से मुक्त नहीं हो जाते आदि सब योजनाएं और प्रक्रियाएं जनता और सरकार को मिलकर करनी चाहिएं । राष्ट्र के नेता और समाज-सेवी संस्थाओं को एक तीव्र अभियान समूचे देश में चलाने के लिए स्वयं सेवकों, लग्नशील तपस्वी कार्यकर्त्ताओं, प्रचारकों चिकित्सकों, शिक्षा-शास्त्रियों का पूरा सहयोग लेना चाहिए जो जनता के मन पर यह अमिट छाप लगा सके कि कुष्ठ रोग प्लेग की तरह संक्रामक नहीं है, प्रत्युत यह हल्के प्रकार की छूत की बीमारी है जो रोगी के व्रणों के स्राव या मुख के थूक के सीधे सम्पर्क से मिलने वाले व्यक्ति को प्रभावित कर सकती है । यह रोग हमेशा के लिए मिटाया जा सकता है यदि इसका पता लगते ही इलाज शुरू करके, रोग के लक्षण मिट जाने के पश्चात भी कम से कम दो वर्ष तक नियम पूर्वक इलाज जारी रखा जाय और आहार-विहार में पथ्य का सेवन किया जाए । महात्मा गांधीजी और स्वर्गीय महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी सरीखे महा-पुरुषों ने स्वयं कुष्ठ रोगियों के प्रति सहृदयता और सहानुभूति से काम लिया था ।

इस महारोग की व्याप्ति समस्त संसार में, विशेषत : हमारे देश में बहुत भयानक रूप में दिखाई देती है । इसे साधारण बोल-चाल में कोढ़ के नाम से पुकारा जाता है । आयुर्वेद विज्ञान के अनुसार यह रोग मानव समाज में अहित और परस्पर विरुद्ध भारी भोजन तथा भारी पदार्थों के सेवन करने और वमन, मल-मूत्र आदि वेगों को बहुत देर तक रोके रखने, गुड़ के अधिक सेवन से, अजीर्ण अर्थात भोजन न पचने की अवस्था में, भोगविलास के फंदे में पड़ने एवं गुरुजनों तथा धर्मात्माओं का अपमान करने से तथा कुष्ठ रोगियों के शारीरिक सम्पर्क से स्वस्थ व्यक्ति को लग सकता है । यह रोग माता पिता से जन्म से संतान में नहीं होता । इसका अर्थ यह है कि कोढ़ी का बच्चा कोढ़ी नहीं होता परन्तु कुष्ठ रोगी के थूक और त्वचा के व्रणों और विदीर्ण भागों से इस रोग के कीटाणु किसी के भी शरीर में प्रवेश करके यह रोग पैदा कर सकते हैं । आधुनिक वैज्ञानिक भी इस मत को स्वीकार करते हैं । अब देश को इस रोग से बचाने के लिए कुष्ठ रोगियों के निवास केन्द्रों का नगरों से काफी दूर बसाया जाना जरूरी है और वहीं पर उनके लिए रोजगार और चिकित्सा की व्यवस्था सरकार और जनता को करनी चाहिए ।

यह रोग भारत जैसे गर्म देशों में ज्यादा होता है । उसमें भी बंगाल के कुछ सूखे भागों जैसे वीरभूम, बांकुरा, मिदनापुर और उड़ीसा के समुद्री किनारे के समीप-वर्ती इलाकों में बहुत अधिक होता है । वहां खाद्य द्रव्यों की कमी अर्थात् सत्वहीन मोटा चावल, शाकाहार का न मिलना, मछली भी वजन में बहुत कम मिलना अथवा उपदंशादि रोगों के कारण रक्त शून्यता और रक्त का दूषित हो जाना भी विशेष अवस्थाएं हैं जिनमें यह रोग फैलता है । जो नगर समुद्र तट के पास हैं या बड़ी नदियों के किनारे स्थित हैं, उन्हीं में यह रोग अधिक फैलता है । विशेषतया स्कैन्डेनेविया, आइसलैंड, लाप-लैण्ड, चीन, भारत, वैस्ट इण्डीज, में तो जहां लोगों की खुराक केवल अर्धपकी नमक वाली मछली ही है, खुराक की तत्वहीनता और वायु में आद्रता के कारण बहुत अधिक फैलता है । अनेक कुष्ठ रोगी

बाजारों और गलियों में भीख मांगते या छोटे खाद्य पदार्थ बेचते दिखाई देते हैं और कलकत्ता जैसे महानगर में तो यह दृश्य बहुत ज्यादा है और कुष्ठ रोगी स्वस्थ जनता में इस महारोग का प्रसार कर रहे हैं जिसकी ओर जनता और सरकार दोनों को ध्यान देना जरूरी है। चिकित्सक वर्ग, नर्सें और परिचारक या सेवा करने वाले लोग भी कदाचित अपनी असावधानी या प्रमाद के कारण इस रोग से ग्रस्त हो जाते हैं। अतः उन्हें हमेशा ही सेवा कार्य के समय रबड़ के शुद्ध दस्ताने जरूर प्रयोग करने चाहिए और समस्त शरीर को छूत से बचाने के लिए संरक्षक प्रकार का कपड़ा हमेशा प्रयोग करना चाहिए। जिन बच्चों या युवकों के रक्त में इस रोग की छूत प्रवेश कर जाती है उनमें अनेक वर्षों तक इस रोग का कोई भी लक्षण दिखाई नहीं पड़ता परन्तु जब किसी अन्य रोग के कारण रोगी की रोगरोधिता नष्ट या कम हो जाती है तब कुष्ठ रोग का आरम्भ स्पष्ट दिखाई देता है। अत: जो बच्चे या युवा कुष्ठ रोगियों की आबादी में बहुत दिन निवास कर चुके हों उन्हें रोकथाम का इलाज जरूर करना चाहिए।

आधुनिक विज्ञान में कुष्ठ के मुख्य दो-तीन प्रकार माने गए हैं अर्थात 1.त्वचा विकास सम्बन्धी (लेपरोमेट्स), 2. वातनाड़ी सम्बन्धी (न्यूरल) और 3. क्षय या यक्ष्मा सम्बन्धी (ट्यूबर-क्यूलायड। इन में से प्रत्येक के लक्षण उनके इलाज के साथ ही स्पष्ट कर दिए जाएंगे। जन साधारण हमारे देश में प्राय: प्रथम प्रकार को ही कुष्ठ समझते हैं क्योंकि इसमें शरीर के किसी भाग में या समूचे शरीर की त्वचा का रंग बिगड़कर भद्दापन आ जाता है। बहुत से लोगों में शरीर पर एक या अनेक जगह सफेद दाग पड़ जाते हैं जिन्हें श्वेत वर्ण के कारण श्वेत भी कहा जाता है। परन्तु यह कुष्ठ रोग नहीं होता और न ही इसमें किसी छूत का भय होता है। दूसरे प्रकार के कुष्ठ नाड़ियों का नाश करते हैं। आयुर्वेद में वातज, पितज, कफज वातपितज, वातकफज, पित्तकफज और सन्निपातज तथा इसी प्रकार धातुगत कुष्ठ, रक्तगत, मांसगत, मेदगत, अस्थिगत, मज्जा-गत, वीर्य या रजोगत (स्त्रियों में) कुष्ठ रोग होता है और उसी सिद्धान्तानुसार उसके लक्षण होते हैं और साध्य-असाध्य निर्णय भी होता है।

चमड़ी का अधिक चिकना या रूखा होना, त्वचा की विवर्णता, सुन्न हो जाना, स्पर्शज्ञान नष्ट हो जाना, शरीर पर जगह-जगह मोटे-मोटे चकत्ते पड़ जाना, बिना परिश्रम के थकान मालूम होना, खुजली आदि कुष्ठ रोग के पूर्व रूप हैं।

रोग का आरम्भ

इस रोग का कीटाणु प्राय: दस से तीस वर्ष की आयु वाले लोगों को ही रोगग्रस्त करता है और प्रथम प्राय: नाक की झिल्ली या शरीर की चमड़ी में ही प्रवेश करके त्वचा के सबसे अन्द-रूनी स्तर में अपना घर बनाता है। इसके तीन ही परिणाम हो सकते हैं। (1) शरीर की अपनी क्षमता उस कीटाणु का पूरा विनाश कर देती है। (2) शरीर के अन्दर यह विष बहुत वर्षों तक छिपा रह सकता है। (3) अपने प्रथम केन्द्र से यह कीटाणु लसीका वाहिनियों और वातनाड़ियों के साथ-साथ अपने गुच्छे बनाकर आगे फैलना शुरू हो जाता है और रक्त प्रवाह में मिल कर भी समस्त शरीर को ग्रस्त कर लेता है। रक्तवाहिनी नाड़ियों के साथ-साथ भी इसके गच्छे एकत्र हो जाते हैं। मानव शरीर में तिल्ली (प्लीहा) और जिगर (यकृत) में कुछ वृद्धि हो जाती है। दूषित भाग की समीपवर्ती लसीका ग्रन्थियां फूलकर मोटी और कड़ी हो जाती हैं। इलाज न होने पर प्राय: यह पक कर पीपयुक्त हो जाती हैं। नाक, जीभ, गला, स्वरयंत्र की अन्दरुनी झिल्लियां और कुछ सीमा तक आमाशय और आंत भी इसी प्रकार कुप्रभावित हो जाती हैं। अण्ड और बिम्ब ग्रन्थियां भी सख्त हो जाती हैं।। आरम्भ में स्वास्थ्य स्तर गिरने लगता है, उसके पश्चात ज्वर का आक्रमण कुछ आराम के बाद बार-बार होने लगता है। दिन प्रतिदिन कमजोरी बढ़ती जाती है। अजीर्ण और पाचन शक्ति का नाश हो जाता है और नाक से कभी-कभी रक्त बाहर आने लगता है। पसीना बहुत आता है, विशेषतयां छाती और पीठ पर बहने लगता है। समस्त शरीर की मांस पेशियों में अति वेदना या दर्द होने लगता है। चमड़ी का कुछ भाग संवेदना रहित हो जाता है और कभी शरीर में सूइयां सी चुभने लगती हैं। इन लक्षणों के आते-आते एक छोटा सा उभार त्वचा पर उभर आता है। वह बढ़ते-बढ़ते अधिक विस्तृत हो जाता है तथा वह स्थान संवेदना रहित होता है वह धब्बा त्वचा के रंग से भिन्न होकर विकृत रंग का बन जाता है। बाज की नस के साथ का समस्त भाग दुखने लगता है। हाथ लगाने मात्र से कष्ट होता है। उसी स्थान पर छाला सा पड़ जाता है। कुछ समय बाद वह छाला बैठ जाता है तथा उस स्थान पर एक उभरा हुआ समतल दाग-निशान या धब्बा पड़ जाता है। उसमें चुभन, जलन और सरसराहट होती रहती है। यह धब्बे प्राय: नाक, आंख की भृकुटि, कान का बाहरी भाग, मुखमंडल, हाथ-पांव के बाहरी भाग, कमर के नीचे, पीठ और छाती पर हुआ करते हैं। चमड़ी चमकने लगती है, त्वचा में रुक्षता हो जाती है, बाल गिरने लगते हैं, प्राय: नेत्रों की भृकुटि के बाल प्रथम गिरते हैं। कुछ विशेष विजातीय पदार्थ मांस पेशियों या वात नाड़ियों पर उभार पैदा कर देते हैं। यह उभार बढ़कर त्वचा पर हल्के रंग के धब्बे विशेषत: कानों के बाहरी भाग और मुखमंडल पर ज्यादा दिखलाई देते हैं। वह भाग मोटा, सूजन वाला और खुरदरा हो जाता है तथा समस्त शरीर पर धब्बे पड़ने लगते हैं जिससे चेहरा विकृत और भद्दा हो जाता है। जुकाम और दर्द के दौरे पड़ने लगते हैं। नाक, मुंह और गले की झिल्लियों में दाने पड़कर व्रण हो जाते हैं। नाक की हड्डी नष्ट हो जाती है और यह नीचे बैठ जाती है। रोग का इलाज न होने के कारण अनेक अन्य उपद्रव जैसे अमाशय-आंत रोग, सांस की नाली और स्वरयंत्र में रुकावट पदा हो जाती है। वात नाड़ी सम्बन्धी कुष्ठ में नसों पर बढ़ते हुए उभारों का दबाव पड़ने से वह स्थान संज्ञाहीन हो जाते

हैं । सभी ज्ञान केन्द्र और शारीरिक क्रियाएं बिगड़ जाती हैं । कभी नकसीर भ: चलती है । रोगी अपाहज और विकलांग हो जाता है । यह रोगी दीर्घकाल तक रोगग्रस्त रहता है । कभी-कभी रोगी शीघ्र मर भी जाता है ।

कुष्ठ रोग का इलाज

सर्वप्रथम रोगी का पूर्ण विश्वास प्राप्त करना बहुत आवश्यक है । विश्वास दिलाना चिकित्सक का परम कर्त्तव्य है कि रोगी निश्चय ही रोग मक्त हो जाएगा परन्तु उसे पूर्णत: ज्ञान कराना पड़ता है कि उसे पथ्य सेवी बनकर रहना होगा और रोगी के स्वस्थ होने में दो या तीन वर्ष तक लग सकते हैं । ठीक स्वास्थ्य प्राप्त होने के पश्चात भी कम से कम एक वर्ष तक दवाई का सेवन नियमपूर्वक करना चाहिए क्योंकि व्रणों के स्राव कीटाणु मक्त हो जाने पर भी गम्भीर मांस तंतुओं में उनका अस्तित्व चलता है । रोगी एक बार नीरोग होकर दवाई और पथ्य को भूलकर पुन: कुष्ठरोगग्रस्त होकर मुसीबत में पड़ जाता है । रोगी को अपने खान-पान के बर्तन, पहनने के कपड़े दूसरों से पृथक रखने चाहिए । खले स्थान में रहना, शरीर की शुद्धि, आत्म विश्वास, मन की प्रसन्नता का पूरा ध्यान रखना चाहिए । केवल नाड़ियों के रोगी से छूत का भय नहीं रहता । ऐसे रोगियों के बच्चों को बिल्कुल पृथक रखना चाहिए । आयुर्वेदानुसार कुष्ठ के सब रोगियों का इलाज एक ही प्रकार की दवाई से नहीं किया जाता । दोष और धातु के विचार से परिवर्तन होता रहता है । संचित दोषों को निकालने के लिए वमन और विरेचन रोगी के बल के अनुसार हर 15 दिन अथवा महीने में एक बार कराया जाना जरूरी है । जिनका रक्त दूषित हो जाता है उनका रक्त मोक्षण कराया जाना चाहिए । यह भी कुछ समय के पश्चात् कई बार कराना पड़ता है । इलाज में व्रणों अथवा त्वचा की विवर्णता को दूर करने के लिए अनेक प्रकार के लेप या औषधि सिद्ध तेल लगाने पड़ते हैं जिसे मनशिलादि तेल, वहद् मरिचादि तेल, सिन्दूरादि तेल और अर्कतेल और इसी प्रकार कुष्ठादि लेप, गन्ध पाषाणादि लेप, मूलक बीजादि लेप, और लाक्षादि लेप जैसे अनेक प्रकार के लेप हैं जिनका प्रयोग किया जाता है । इसी प्रकार अनेक कषाय, क्वाथ, घृत, चूर्ण, अवलेह, गुटिका तथा रसादि योगों का प्रयोग होता है । इनमें काष्टादि वर्ग से खदिर छाल, नीम छाल, बावची, हल्दी, सिन्दूर, रसौत, गिलोय, शिरीष छाल, सप्तपर्ण छाल, करंज, चम्बेली, दारूहल्दी, पनवाड़ बीज, सरसों, कचूर, भिलावे, इत्यादि द्रव्य अनेक योगों में डाले जाते हैं । रसादि औषधियों में हरिताल और मनसिला, ताम्र भस्म, कांस भस्म, पारद, गन्धक इत्यादि का प्रयोग भिन्न-भिन्न योगों में होता है । विजयेश्वरो रस, रस माणिकच, छोटे से दृष्टान्त हैं । आसव-अरिष्टों में खादिरासव-खरिदारिष्ट का प्रयोग होता है । मूत्र वर्ग में गोमूत्र का प्रयोग बाह्य और अन्दर खाने के लिए दोनों तरह से होता है । खान-पान में रोगी को पौष्टिक खुराक और मानवता का व्यवहार चाहिए । खाद्य पदार्थों में रक्त शोधक, लघुपाकी और तिक्त अर्थात कड़वे रस वाली तरकारियां और फल लाभदायक हैं । मधुर रस के द्रव्य वर्जित हैं । अत: गुड़, चीनी इत्यादि नहीं देनी चाहिए । आधुनिक वैज्ञानिकों ने बहुत ही खोज और शोध कार्य किए हैं । ▭

रसभीना फागुनी प्रभात

रसभीना लगता है फागुनी प्रभात,
फागुन में सावन सा भीग रहा गात ।

बासन्ती छटा आज सुना रही बोल
सुरभित सुगंध बही मधुरिमा घोल,
टेसू मन कहता है हंस कर बेदाग
कुण्ठायें भस्म हुई खेल करके फाग ।

बिखर गई मादकता कहते ही बात,
रसभीना लगता है फागुनी प्रभात ।

गली-गली, गांव-गांव एक ही सवाल
हास्य की पिचकारी व्यंग्य का गुलाल,
ढोलक की स्वर-लहरीं बजे ढांव-ढांव
मस्तानी चाल हुई बहक रहे पांव ।

उन्मादी होली यह फैल रही ख्यात,
रसभीना लगता है फागुनी प्रभात ।

मदन गोपाल शर्मा
60, अनुपम नगर, नोलखा परेड,
ग्वालियर-474011

कहानी

आपे में आगया

डा० शीतांशु भारद्वाज

झील की नगरी नैनीताल में शाम के साए लम्बे होते जा रहे थे। झील के सीने पर अब भी कुछ पालवाली नावें तैर रही थीं। सैलानियों के दल सैर-सपाटे के लिए माल पर निकल आए थे। तल्ली ताल में अपने घर के छज्जे पर खड़ी जया की नजरें बस स्टैंड की ओर लगी हुई थीं। वे थकी हुई आंखें हयात को ढूंढ़ रही थीं। किंतु वह कहीं भी तो नहीं दीख रहा था।

मां। पिताजी नहीं आए न? नन्हीं गीतू ने जया की टांगों से लिपटकर पूछा। आ जाएंगे। जया ने सस्नेह बेटी का सिर सहला दिया, जा तू जाकर खेल। जया को हयात पिछले पांच-छ: वर्ष से बाघ की तरह झिंझोड़ता आ रहा है। किन्तु उसके उस व्यवहार पर वह उफ तक नहीं कर पाती। चुपचाप वह उस शराबी की वासना की आग में झुलसती रहती है। मन के साथ-साथ उसका तन-बदन भी टूटने लगा है। इस स्थिति के लिए वह अपने मां-बाप को भी तो दोष नहीं दे सकती। जीवन-साथी के रूप में हयात को उसने खुद ही तो पसंद किया था। उसके पिताजी रेल-सेवा में थे। उन दिनों वे लोग हल्दवानी में रहा करते थे। घर में रिश्ते की बात पहले से ही चल रही थी। एक दिन मां और मौसी के साथ वह बस अड्डे की ओर आ गई थी।

जया। मां ने दूर से ही हयात को दिखलाते हुए कहा था, वो रहे अपने दामाद।

जया शर्मसार हो आई थी। हयात के गेहुंवे वर्ण के चेहरे पर उग आई स्याही दाढ़ी उसे कितनी अच्छी लगी थी। उस समय वह बस के स्टियरिंग पर हाथ रखे हुए बीड़ी फूंक रहा था।

बड़ा भोला है। मौसी बोली थी, ड्राइवर होकर भी कोई ऐब नहीं पालता।

ऐसा दामाद भी भाग से ही मिलता है बहिन। मां मुस्करा दी थी।

और जया मन-ही-मन सोच रही थी कि विवाह के बाद वह उससे ढाढ़ी-मूछ साफ करने को कहेगी। यह भी क्या बात हुई कि खाने-खेलने के दिनों में साधु-महात्माओं की तरह दाढ़ी बढ़ा ली जाए। इस पर वह स्वयं ही मुस्करा दी थी।

जया। मां ने धीरे से उसके कंधे पर हाथ रख दिया था।

जया जैसे सपने से जाग पड़ी थी।

रिश्ते की बात पक्की हुई। शहनाई बजी। हयात उसके द्वार पर बारात लेकर आया। मां ने रोती-बिलखती हुई जया को समझाया था, भले घर में जा रही है बेटी। न सास, न देवर और न जेठानी। राज करेगी, राज।

मां, पिताजी नहीं आए न। गीतू फिर से जया के पास जा खड़ी हुई।

जया चेती। झील की नगरी नियोनी रोशनी में जगमगाने लगी थी। गीतू को उसने गोद में उठा लिया। उसके बाद वह अंदर कमरे में चल दी।

आधी रात हो गई थी। हयात अब तक भी नहीं आया था। गीतू बेटी को सुलाकर जया फिर से बाहर छज्जे पर आ गई। सामने माल पर इक्के-दुक्के सैलानी ही रह गए थे। बस अड्डे पर सुनसानी छाई हुई थी। वह उसी प्रकार पति के ही बारे में सोचती जा रही थी।

हयात में ऐसे अवगुण पहले तो नहीं थे। सुबह-सवेरे चाय पीकर वह सीधे ही अपने काम पर निकल जाता था। शाम ढलते ही वह घर लौट आता था। उन दिनों उसे शराब की हवा तक नहीं लगी थी।

हयात। श्वसुर उसे हरदम ही सावधान करते रहते, मंडी के जुआरियों की संगत न करना। अच्छा।

अच्छा जी। काम पर जाता हुआ हयात बुजुर्गों की उस सीख को अच्छी तरह से गांठ बांध लिया करता।

उन दिनों जया उस घर में सचमुच ही राज-रानियों की तरह से राज किया करती थी।

जया सिनेमा चलेगी? जब-तब हयात उसके सामने फिल्म देखने का प्रस्ताव रख देता। जया उसकी हर बात मान लेती। हयात उसे अपने साथ सैर-सपाटे के लिए ले जाता। भीमताल, नौकुचियाताल, रामगढ़-मुक्तेश्वर, उसने सभी स्थानों की सैर की थी।

श्वसुर की मृत्यु के बाद हयात बदलने लगा था। जया आश्चर्यचकित रह गई थी। पिता की मृत्यु पर उसके मुंह से उफ तक नहीं निकली थी। वह बेचारी रोती-बिलखती रही थी। रो-रो कर उसकी आंखें सूज गई थीं।

बस भी कर जया। हयात उसके आंसू पोंछता हुआ बोला था, पेड़ के पीले पत्ते को तो एक-न-एक दिन झड़ना ही था।

आकाश का किनारा भले ही मिल जाए किंतु मनुष्य के अंदर का पता नहीं चल पाता। न जाने कब उसका दिल बदल जाए। हयात भी धीरे-धीरे बदलने लगा था। साथियों की संगति रंग लाने लगी थी। बहुत जल्दी ही वह हल्दवानी-नैनीताल के नामी-गिरामी शराबियों में गिना जाने लगा।

धत्तेरे की। गीतू के जन्म पर तो हयात उस पर बुरी तरह झुंझला पड़ा था पहली औलाद साली औरत जात निकली।

कोई नहीं। जया हंस पड़ी थी, यह तो साक्षात लक्ष्मी ही आई है।

उस दिन हयात ने जमकर पी थी।

जया ही जानती है कि कितने लाड़-प्यार से वह अपनी गुड़िया-सी बेटी को पालती

आ रही है। लोरी के गीत गाते-गाते उसने उसका नाम गीतू रख दिया था। जया, इस बार तो मैं लड़का चाहता हूं एक बार उसे झिंझोड़ते हुए उसने कहा था।

क्यों जी, लड़का ही ऐसा कौन-सा सुख देता है जो. . . . ।

वह पितरों का उद्धार करता है। उसने कहा था।

हयात के उस कथन ने जया को चौंका दिया था। उसका मन हुआ था कि कहे, "तुम भी तो पितरों का उद्धार कर रहे हो न।" किन्तु उसने अपने मन को जब्ब कर लिया था।

गली पार के घर से तारा की चीख-पुकार सुनाई दी। छज्जे पर खड़ा जगत सिंह उसे बुरी तरह पीट रहा था। क्रोध के उफान में वह बुरी-बुरी गालियां दिए जा रहा था, सुसरी, इधर-उधर घूमती-फिरती रहती है? सुनकर जया खित्-से हंस पड़ी। दुनिया भरके मर्द तो आजाद रहें। उन्हें कोई कुछ नहीं कहता। औरतों को ही क्यों कहा जाता है?

औरत जात का जन्म ही खूंटे से बंधने के लिए होता है। मां कहा करती थी। वो कैसे मां? वह मां का मुंह ताकने लगती।

गाय होती है न। मां उसे अपनी बात समझाने लगती, उसे जहां भी बांध दिया, वह वहीं बंधी रहती है। हमारी जात भी तो ऐसी ही है।

उस आधी रात को जगत सिंह के घर के आस-पास कुछ तमाशबीन जमा हो गए थे। वह उसी प्रकार गालियां बकता जा रहा था।

अंदर गीतू नींद में ही कुनमुनाने लगी थी।

गीतू। ए गीतू। अंदर पहुंच कर जया बिटिया को हिलाने-डुलाने लगी, पेशाब करेगी? गीतू करवट बदलकर फिर से सो गई। जया उसी की बगल में लेट गई। उसके मन के घोड़े फिर दौड़ने लगे। पानी का बहाव बदला जा सकता है किन्तु आदमी का मन बदलना कठिन होता है। तो क्या हयात को नहीं सुधारा जा सकता? जया अजीब सी उधेड़बुन में पड़ने लगी।

औरत की हंसी और मरद की खांसी दोनों ही जादू का-सा काम करते हैं। मां कहा करती थी।

वो कैसे मां?

हंसना और रोना, औरत के पास यही तो दो हथियार हुआ करते हैं। मां के होंठों पर रहस्यमयी मुस्कान उभर आती, बिना लड़े ही वह इनसे सारी दुनिया को नाच नचवा सकती है।

बाहर दरवाजे पर खट-खट हुई। जया सामान्य हो गई। उसने अन्दर से ही पूछा, कौन?

मैं। हयात का बुझा हुआ स्वर था।

जमहाई लेती हुई जया द्वार तक गई। उसने दरवाजा खोल दिया। हयात ही था। किन्तु इस बार उसके पांवों में लड़खड़ाहट नहीं थी। मुंह से शराब की बू भी नहीं आ रही थी।

हाथ धो लो। जया ने उसे पानी का लोटा थमा दिया, मैं खाना गर्म करती हूं।

आज तारा फिर से पिटी है शायद। हयात हाथ-पांव धोते हुए बोला।

वहां तो रोज ही ऐसा होता है। जया ने कोई रुचि नहीं ली।

सुसरी, आज मैं तेरा भुरता ही बनाकर रख छोड़ूंगा। उस पार से जगत सिंह उसी प्रकार तारा पर बिफर रहा था।

बदफैल औरत है। हयात ने मुंह बिचका दिया।

जया चुपचाप उसके पांव धुलाती रही। हयात चौके में पालथी मारकर बैठ गया। जया उसे खाना खिलाने लगी।

क्यों जी, बाघ अपने शिकार को कैसे झिंझोड़ता होगा? जया ने हयात की कटोरी में दाल डालते हुए पूछा।

बाघ? हयात रोटी तोड़ते-तोड़ते रह गया।

हां। जया तिरछी नजर से मुस्करा दी।

हयात न जाने कितने दिनों के बाद जया को प्यार भरी नजरों से देख रहा था। अगले ही क्षण उसने उसकी कलाई थाम ली।

ए हिश। जया ने कलाई छुड़वा ली।

खाना खाकर हयात बिस्तर पर लेट गया। उसके व्यवहार से जया को आश्चर्य हो रहा था। उसमें आए परिवर्तन का वह कारण नहीं समझ पा रही थी।

क्यों जी, आज पीने को कुछ नहीं मिला क्या? जया ने अपने मन की बात पूछ ही ली।

अब शराब पीकर गाड़ी चलाने की मनाही हो गई है। हयात की आंखों में पहले जैसा ही प्यार छलक आया।

क्यों जी, इस सौतन को मुंह लगाने से तुम्हें क्या मिलता है? जया ने उस पर एक मोहक कटाक्ष डाली।

कौन सी सौतन?

यही मुई टिंचरी। जया खित्-से हंस पड़ी।

तुम जानो जया कि ड्राइवर लोग अगर पिएं नहीं तो रोडवेज की खटारा गाड़ियों को कैसे खींचें? वह अपनी बिरादरी की तरफदारी करने लगा।

सेब-नासपाती भी तो ताकत देते हैं न। जया की अंगुलियां उसके सिर के बालों से खेलने लगीं।

सेब। हयात ने हौले से उसे अपनी ओर खींच लिया, कच्चे सेब में वह ताकत कहां जो. . . . . .।

चलो, भला हो सरकार का। जया ने अपना सिर उसकी छाती में गड़ा दिया, नहीं तो एक ड्राइवर कइयों की जान ले लेता है।

पहले कसम खाओ कि आज से कभी भी शराब को नहीं छुओगे। जया उसे वचन-बद्ध करने लगी।

कसम खाता हूं जया कि आज से कभी भी शराब को नहीं छुऊंगा। □

शीतांशु भारद्वाज,
50–विद्या विहार,
पिलानी, (राज०)-333031

साहित्य समीक्षा

हरियाणा गौरव गाथा (काव्य) : कवि : उदयभानु 'हंस', प्रकाशक : शिशिर प्रकाशन, 169-ए, आबू लेन, मेरठ-250001, पृष्ठ संख्या : 180, मूल्य : 40 रुपये ।

हरियाणा के "राज्य कवि" श्री उदयभानु 'हंस' की प्रस्तुत काव्य-कृति 'हरियाणा गौरव–गाथा' निःसंदेह गौरव करने योग्य कृति है, जिसमें भारत-गणतन्त्र के इस राज्य की गौरव-गाथा कवि ने मनोयोग पुर्वक कही है । यह सर्वमान्य तथ्य है कि 'सरस्वती से अभिसिंचित 'कुरुक्षेत्र' की यह भूमि ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं की दृष्टि क्षेत्र में प्रगति की ओर अग्रसर है । 'हरियाणा गौरव-गाथा' में कवि श्री 'हंस' ने प्रवाहपूर्ण एवं आलंकारिक भाषा शैली में सजीव चित्रण किया है, जो प्रेरक प्रयास कहा जाना चाहिए ।

काव्य-ग्रंथ को कवि ने अपनी सुरुचि-संपन्नता का परिचय देते हुए आठ सर्गों में बांटा है (1) संस्कृति-पर्व (2) उषा पर्व (3) शक्ति पर्व (4) संघर्ष पर्व (5) क्रान्ति पर्व (6) मुक्ति पर्व (7) विकास पर्व और (8) विभूति पर्व । यह नामकरण सर्वथा मौलिक और प्रतीकात्मक होने के साथ-साथ साहित्य प्रेमियों के आकर्षण में अभिवृद्धि भी कराता है। कवि के शब्द समरणीय हैं–– "नीरस इतिहास को मैंने कविता की भाषा देने का प्रयास किया है । विवरणात्मक प्रसंगों में भी यत्र-तत्र कल्पना के रंग भर दिए हैं । विशाल काल-खंड को छन्द की सीमा में बांधने के लिए समास-शैली का सहारा लेना पड़ा।. . .वस्तुतः 'हरियाणा गौरव-गाथा' एक काव्य है, कोरा इतिहास नहीं ।"

मैं कवि के शब्दों से सहमत हूं और मानता हूं कि 'इतिहास' को कविता की भाषा देना 'दुधारी तलवार' पर चलने जैसे होता है, जिसमें कवि सौभाग्य से सफल रहा है । बहुत छोटे छन्द में बात कहने के लिए 'व्यंजना' बेहद जरूरी हो जाता है, यह कवि के छन्द से स्पष्ट है :––

"यह धर्म-क्षेत्र की भूमिका,
है कलाकार की तूलिका !
यह प्रकृति-नटी का धाम है,
यह देव भूमि अभिराम है ।
* * *
यह कुरु–जनपद का गर्व है,
सम्राट हर्ष का पर्व है ।
वीरों का स्कंधावार है,
यह जगती का शृंगार है"

ऐसे काव्यग्रंथ 'राष्ट्रीयता' की भावना में अभिवृद्धि करते हैं, लेकिन फिर भी राज्य-शासन ने इसे नहीं छपाया, यह खेद की बात है। प्रकाशक ने मुद्रण और साज-सज्जा में परिश्रम किया है, लेकिन मूल्य सचमुच बहुत अधिक है, जो इस श्रेष्ठ काव्य के प्रचार-प्रसार में बाधक बनेगा । कवि की उत्तम कृति जन-मन तक पहुंचनी चाहिए ।

डा० योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'
बी० एस० एम० कालेज,
रुड़की-247667

किशोरियाँ-माता पिता के साथ तनाव और टकराव : लेखिका : डा० प्रमिला कपूर, प्रकाशक : राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 120, मूल्य : 15 रुपये ।

जिस मात्रा में भारतीय समाज जटिल है उतनी मात्रा में सामाजिक अध्ययन उपलब्ध नहीं होता है । यदि मिलता भी है तो अंग्रेजी भाषा में । हिन्दी में समाज शास्त्रीय पुस्तकों की न्यूनता है । डा० प्रमिला कपूर विख्यात समाज शास्त्री हैं । इन्होंने भारतीय महिला की नाज़ुक एवं जटिल स्थिति को समझने एवं अध्ययन विश्लेषण करने का प्रशंसात्मक कार्य किया है ।

जहां एक ओर पश्चिम में परिवार की मान्यता लगभग टूटकर बिखर गई है, वहीं दूसरी ओर भारतीय समाज अब भी परिवार की आधार भूमि पर टिका हुआ है । परन्तु एक तरफ पश्चिम का चकाचौंधपूर्ण व्यक्तिवादी आकर्षण है और दूसरी ओर भारतीय संस्कारों का 'बन्धन' है। किशोरावस्था मानव जीवन की अत्यधिक नाजक अवस्था है। अनेक रचनाकारों ने इस अवस्था की जटिलता को विभिन्न कोणों से देखा-परखा है । यही वह अवस्था है जहां मानव जीवन में महत्वपूर्ण शारीरिक तथा मानसिक परिवर्तन होते हैं । इस अवस्था में जीवन की अनेक ऐसी सीढ़ियां आती हैं जिस पर से पैर फिसल जाए तो भविष्य डगमगा जाता है । इस अवस्था में अपने को सही समझने तथा जिद आदि के भाव प्रबल रहते हैं। परिवार में माता-पिता को अपने किशोर बच्चों को सम्भालने में विशेष कठिनाई होती है।

लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में, किशोरावस्था में विशेष शारीरिक एवं मानसिक परिवर्तन होते हैं । डा० प्रमिला कपूर स्वयं एक महिला हैं । अत : किशोरियों की समस्याओं से अधिक निकट हैं । डा० प्रमिला कपूर ने किशोरावस्था में उत्पन्न होने वाली पारिवारिक, शारीरिक, मानसिक, आर्थिक आदि समस्याओं का सूक्ष्मता से अध्ययन किया है और उसका सही विश्लेषण पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है । लेखिका विषय को सही रूप में पकड़ती है । लेखिका ने अपनी ओर से कुछ थोपा नहीं है

अपितु किशोरियों से जो बातचीत की है, उनके माता-पिताओं से जो बातचीत की है, उसे पुस्तक में प्रस्तुत किया है तथा उसके पश्चात उस समस्या के प्रति अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। इस प्रकार अध्ययन विश्लेषणात्मक एवं प्रमाणित हो गया है। लेखिका ने पुस्तक में किशोरियों के शारीरिक विकास संबंधी तनावों, परिवार में भेदभाव, स्वभाव प्रवृति और व्यवहार की समस्याओं, सेक्स और वर चुनाव के मामले आदि को व्यापक स्तर पर विश्लेषित किया है।

यह पुस्तक किशोरियों एवं उनके माता-पिताओं के लिए आवश्यक पुस्तक है। मेरा विश्वास है कि इसके अध्ययन के द्वारा टकराव की अनेक स्थितियां बचाई जा सकती हैं। यह पुस्तक संबंधों की एक नई समझ तथा एक नया दृष्टिकोण देती है। अच्छा हो ऐसा ही अध्ययन किशोरों को लेकर भी किया जाए।

प्रेम जनमेजय,
14-बी, पाकेट-एल, त्रिवेणी (शेख सराय, फेस-2)
नई दिल्ली-110017

ताकि वे जी सकें (उपन्यास) : लेखक : दीप चन्द बिहारी, अनुवादक : योगेन्द्र शर्मा, प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 248, मूल्य : 25 रुपये।

यह पुस्तक अंग्रेजी में लिखे, लेखक के मूल उपन्यास "दैट अदर्स माइट लिव", का हिन्दी अनुवाद है। अनुवाद बेशक सम्पूर्ण है और शायद इसी प्रयास के कारण कहीं-कहीं शब्दार्थ रूपी झोलदार विवरण तथा विरसता का अनुभव होता है। उपन्यास का प्लॉट 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के बाद की दहाई में उत्पन्न होने वाली राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों से प्रारम्भ होता है और मारीशस में काम करने वाले उन मजदूरों, किसानों के जीवन की अद्भुत गाथा पेश करता है, जो दूर के ढोल सुहावने समझकर अनुबंधित होकर वहां चले गए थे। बहुत से ऐसे थे जो वहां आबाद हो गए और कुछ ऐसे जो अपने उद्देश्य की पूर्ति होने पर वापिस भारत आ गए थे।

मनीष का बाप ब्रिटिश सरकार के अत्याचारों से बचने के लिए नाम बदलकर मारीशस भाग जाता है। मनीष भी बाद में उसकी खोज में इसी प्रकार दूसरे भारतीयों के साथ वहीं पहुंच जाता है। अपने अनुबंध की समाप्ति से पहले ही वह अपने बाप का पता लगा लेता है और यह जानकर कि उसके बाप को सरकारी तौर पर वापिस कलकत्ता भेजा जा रहा है तो मनीश को अपनी सफलता का अहसास हो जाता है। वह सीमा से विवाह करने के इरादे से उसे अपने साथ लेकर भारत आने वाला ही होता है कि उसके प्रवासी मित्र धीरेन को मार दिया जाता है और उसकी होने वाली पत्नी अंजना जहाज से कूद कर आत्महत्या कर लेती है। जहाज भारत जा रहा होता है कि उपन्यास समाप्त हो जाता है।

मारीशस का प्रवासी जीवन, जो इस उपन्यास में सरल और सहज शैली में पेश किया गया है, वह केवल चन्द मजदूरों, घरेलू-कर्मचारियों की सजीव गाथा है। गोरे शासकों के कारोबार, रहन-सहन और सरकारी प्रबंधों के बारे में कोई विशेष रोशनी नहीं डाली गई। यह एक कमजोर पहलू है जिससे एक वर्ग के दूसरे वर्ग से टकराव की बात पूरी तरह प्रतिबिम्बित नहीं होती और न ही पीड़ित तबके के संगठन, जागरुकता और संघर्ष का प्रभावशाली रूप सामने आता है। यह उपन्यास तो केवल वहां के प्रवासियों में एक अहसास पैदा करने की हद से आगे नहीं जाता। शायद इसी अहसास का नतीजा है कि आज मारीशस उन्हीं लोगों के मिले-जुले समाज का स्वाधीन देश है जो आरम्भ में वहां के प्रवासी रहे थे। यह ठीक है कि मारीशस के प्राकृतिक सौंदर्य, भारतीयों का वहां अपनी बोली-चाली तथा संस्कृति का वातावरण बनाए रखना आदि के विवरण की झलकियां बड़ी सजीव, रोचक और उल्लेखनीय हैं।

विदेशी साहित्य को हिन्दी में साफ-सुथरी और आकर्षक पुस्तकों द्वारा भारतीय जनता तक पहुंचाने का यह प्रयास प्रकाशक की बहुत बडी देन है।

राम प्रकाश राही
बी-58, पंडारा रोड, नई दिल्ली

मेरठ षड्यन्त्र : फिरंगी सरकार कटघरे में : लेखक : सोहन सिंह जोश, प्रकाशक : पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 144, मूल्य : 10 रुपये।

यह पुस्तिका मेरठ षड्यन्त्र केस की एक अधूरी कहानी है। भारतीय आन्दोलनकारियों ने अंग्रेजों द्वारा स्थापित उपनिवेशवाद और पूंजीवाद-साम्राज्यवाद के विरुद्ध भरपूर प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। यह 1947 में आने वाली स्वतंत्रता की ओर एक ठोस कदम था। असहयोग आन्दोलन से जनित स्थिति कानपुर षड्यंत्र केस, क्रांतिकारी शक्तियों का गठन, मजदूर किसान पार्टियों की स्थापना, साईमन कमीशन, कांग्रेस का 23वां अधिवेशन, पश्चिमी बंगाल, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश और पंजाब आदि में धरपकड़ आदि घटनाएं देश को एक विशेष दिशा में लिए जा रहीं थीं। अंग्रेजी सरकार दमन नीति पर चल रहीं थी। मेरठ षड्यंत्र केस न अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा में और तीव्रता उत्पन्न कर दी थी। इस पुस्तिका में मेरठ षड्यंत्र केस और उसकी पृष्ठभूमि को सुन्दर रूप से प्रस्तुत किया गया है। अभियुक्तों ने मुकद्दमे के दौरान भी वीरता का परिचय दिया। एक अभियुक्त ने ब्यान देते हुए कहा कि "इस मुकद्दमे में, कटघरे में हम लोग नहीं खड़े हैं बल्कि ब्रिटिश साम्राज्य....कटघरे में खड़ा है....।"

पुस्तिका पढ़ने योग्य है और राष्ट्रीयता की भावनाओं को जाग्रत करती है। कागज और छपाई ठीक है। मूल्य भी अधिक नहीं है।

डा० ताराचरण रस्तोगी
बोरु वाड़ी, गोहाटी-781016

केन्द्र के समाचार

चावल के पौधों के 600 उपभेद

पूर्वोत्तर क्षेत्र में चावल के पौधों के 600 उपभेदों का पता चला है और उन्हें एकत्र किया जा चुका है। इसके अलावा गन्ने के भी कई उपभेदों का पता चला है। वैज्ञानिकों का विचार है कि इन पौधों के प्रजनक विशाल मात्रा में इसी क्षेत्र में हैं। भारतीय वनस्पति संबंधी सर्वेक्षण और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद इन पौधों को सुरक्षित रखने में प्रयत्नशील है ताकि भविष्य में इस प्रकार के पौधों के लिए उपभेद के विकास में इनका उपयोग किया जा सके। इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण पौधों के संसाधनों को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से पूर्वोत्तर क्षेत्र के सभी सात राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों में ऐसे वनस्पति उद्यान बनाए जाएंगे जहां हरी घास और शीशे के बने घर जैसी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध होंगी। इसके अलावा, गोहाटी के वनस्पति उद्यान, शिलांग के निकट दीफू पर वारापानी जैसे उद्यानों का विस्तार और विकास किया जाना चाहिए।

गांवों को सड़कों से जोड़ना

ग्रामीण सड़कों का निर्माण राज्य क्षेत्र में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 1990 तक ऐसे सभी गांवों को, जिनकी जनसंख्या 1500 या इससे अधिक है तथा ऐसे गांवों की कुल संख्या का 50 प्रतिशत जिनकी जनसंख्या 1000 से 1500 के बीच है, सड़कों से जोड़ा जाएगा। कुल गांवों के 50 प्रतिशत गांवों को सड़कों से जोड़ने का कार्यक्रम 1985 तक पूरा हो जाने की संभावना है। 31 मार्च 1980 को देश में 4,41,773 गांव ऐसे थे जिनको अभी तक हर मौसम में काम आने वाली सड़कों से नहीं जोड़ा गया था।

पम्पसेटों को बिजली

छठी योजना के दौरान 25 लाख पम्पसेटों के लिए बिजली देने का प्रस्ताव रखा गया है। इससे देश में बिजली से चलने वाले पम्पसेटों की संख्या मार्च, 1980 की 39.5 लाख से बढ़कर मार्च, 1985 तक 64.5 लाख हो जाएगी। मार्च, 1983 के अन्त तक लगभग 13 लाख पम्पसेटों को बिजली दी जाएगी। जिससे ऐसे पम्पसेटों की संख्या कुल 52.4 लाख हो जाएगी। अभी तक, तमिलनाडु, में सबसे अधिक (8.87 लाख) तथा उसके बाद महाराष्ट्र में (5.97 लाख), आन्ध्र प्रदेश में (3.87 लाख) तथा उत्तर प्रदेश में (3.61 लाख) पम्पसेट विद्यमान हैं। मार्च, 1983 तक इन राज्यों में ऐसे पम्पसेटों की संख्या बढ़कर क्रमशः 9.79 लाख, 7.68 लाख, 5.34 लाख तथा 5.16 लाख हो जाएगी। इन पम्पसेटों के लिए बिजली देने से देश में लघु सिंचाई के अन्तर्गत सिंचाई सुविधाओं में पर्याप्त वृद्धि होगी। सरकार ने 1980–81 वर्ष के दौरान लघु सिंचाई कार्यक्रम में तेजी लाने के लिए अनेक उपाय किए हैं जिनमें 2000 हेक्टेयर तक के कृषि योग्य क्षेत्र के लिए सतही जल तथा भूमि जल परियोजनाएं सम्मिलित हैं। उत्तर-पूर्वी भू-जल के विकास में तीव्रता लाने के लिए असम में 5000 सतही ट्यूबवैलों के निर्माण हेतु जोरदार कार्यक्रम बनाया गया है।

पेय जल के लिए अधिक राशि

केन्द्र सरकार द्वारा चलाए जा रहे त्वरित ग्रामीण जल आपूर्ति कार्यक्रम के अन्तर्गत चालू वित्त वर्ष के दौरान विभिन्न राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों को केन्द्रीय सहायता-अनुदान की पहली किस्त के रूप में 41.03 करोड़ रुपये की राशि दी है। वर्ष 1981–82 के बजट में इस कार्य के लिए 110 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। वर्ष 1980–81 के बजट में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 100 करोड़ रुपये की व्यवस्था थी। इसमें से 84.24 करोड़ रुपये की राशि नियत कार्यों के लिए दी गई और 15 करोड़ रुपये का अतिरिक्त व्यय सूखाग्रस्त राज्यों में खुदाई करने वाले बरमे उपलब्ध कराने हेतु किया गया।

पशु बीमा

सन् 1977 की पशु गणना के अनुसार भारत में 24 करोड़ पशु हैं जिनमें से केवल 10 प्रतिशत बीमा करने लायक हैं। आम बीमा निगम की सहयोगी कम्पनियों ने उनका बीमा का कारोबार करने के लिए एक देहाती क्षेत्र दल बनाया है। अप्रैल, 1976 से एक मार्केट समझौता चालू है जिनके अनुसार प्रीमियम की दरें तथा बीमा पालिसी की शर्तों के मानक तय कर दिए गए हैं। इसके अन्तर्गत दुधारू गायें और भैंसें, बछड़े, सांड और विदेशी नस्लों के पशु और देशी बैलों का बीमा होता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत इन पशुओं को एक वर्ष तक किसी बीमारी तथा दुर्घटना में मृत्यु होने से बीमा का लाभ मिलता है। इसमें बाढ़, तूफान, तथा अकाल से मृत्यु शामिल है। कुछ हालतों में बीमा का लाभ नहीं मिलता जैसे बीमा करवाने से पहले ही लगी बीमारी का इलाज न करवाने से मृत्यु, स्थायी अथवा अस्थायी किसी प्रकार की आंशिक अपंगता और पूर्णतः स्थायी अपंगता जिससे दुधारू पशु दूध देने के लायक बिल्कुल न रहे।

मिट्टी की जांच

मिट्टी की उर्वरा शक्ति को नष्ट न होने देने के लिए उसकी जांच अति आवश्यक है और इसके अनुसार फसलों का चयन, खाद, तथा उर्वरक की मात्रा व फसल चक्र का प्रयोग करें। खाद तथा उर्वरक

पर कम खर्चा और उससे अधिक पैदावार लेने के लिए मिट्टी की जांच एक अमूल्य साधन है । मिट्टी की जांच कम से कम दो या तीन वर्ष में एक बार या प्रत्येक फसल चक्र के बाद करा लेनी चाहिए । इसके लिए सही नमूने का होना बहुत आवश्यक है । कल्लर जमीन में नमक तथा खारे तत्व की मात्रा पानी के उतार चढ़ाव के कारण बदलती रहती है । इसलिए मिट्टी का नमूना एक मीटर गहराई से लेना आवश्यक है । फलदार पौधों की कामयाबी सतह से नीचे जमीन के उपजाऊपन तथा दूसरे हालातों पर निर्भर करती है । इसलिए बागबानी के लिए ऊपर से 1.80 मीटर गहराई तक की मिट्टी की जांच बहुत जरूरी है । फलदार पौधों के लिए मिट्टी का नमूना लें, अलग-अलग प्रकार से इकट्ठे किए गए मिट्टी के नमूनों को जल्दी नजद की मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में भेजना चाहिए ताकि उससे संबंधित सूचना जल्दी से जल्दी मिल सके और उससे लाभ उठा कर अच्छी फसल के साथ अच्छा मुनाफा कमाया जा सके ।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

सरकार ने यह निर्णय किया है कि समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को कार्यान्वित करने हेतु गठित की गई जिला ग्रामीण विकास एजेंसियां/सोसाइटियां अब से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए भी जिम्मेदार होंगी । इसलिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत गठित जिला स्तरीय संचालन समितियों को भंग कर दिया गया है तथा उनका कार्य अब जिला ग्रामीण विकास एजेंसियां/सोसाइटियां देखेंगी ।

केन्द्र सरकार ने चालू वित्त वर्ष के दौरान ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम को लागू करने के लिए राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों को 90.30 करोड़ रुपये की राशि दी है । ▭

फागुन रंग लाया सिंदूरी

मौसम पिचकारी में भरकर,
फागुन रंग लाया सिंदूरी ।
अंगों में सिहरन सी भरती,
फैली है पलाश की लाली ।
सौतन जैसा तड़पाती है,
अमराई म कोयल काली ।
होली में भी न रंग खेला,
संबंधों की कैसी दूरी ?
मौसम पिचकारी में भरकर,
फागुन रंग लाया सिंदूरी ।
अपने अंकपाश में भरकर,
बंधती जाऊं मैं जी भरके ।
और भिगोया तन को ऐसा,
बजने लगे तार अन्तर के ।
सुरभित हुआ आज यह आंगन,
झूम उठी मन में अंगूरी ।
मौसम पिचकारी में भरकर,
फागुन रंग लाया सिंदूरी ।
पीली सरसों के खेतों ने,
न जाने क्या समझाया है ।
जैसे कोई हवा का झोंका,
उनकी राह चला आया है ।
बहुत दिनों की साध अचानक,
लगती आज हुई है पूरी ।
मौसम पिचकारी में भरकर,
फागुन रंग लाया सिंदूरी ।

ठा० जमना प्रसाद 'जलेश'
सिविल लाइन्स-3, दमोह,
(म० प्र०)

भारत 1981

वार्षिक संदर्भ-ग्रंथ

सूचना और प्रसारण मंत्रालय के गवेषणा एवं संदर्भ विभाग द्वारा संकलित एकमात्र आधिकारिक महत्वपूर्ण प्रकाशन। इस ग्रंथ में शिक्षा, स्वास्थ्य, समाज-कल्याण, परिवहन, संचार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, ग्राम पुनर्निर्माण, श्रम, आवास, उद्योग, वाणिज्य, कृषि, बिजली उत्पाद और राष्ट्रीय जीवन के अन्य क्षेत्रों में हुई प्रगति के विषय में उपादेय जानकारी तथा आंकड़े हैं।

पत्रकारों, अध्यापकों, छात्रों, शोधकर्ताओं, अधिकारियों, शिक्षाशास्त्रियों, व्यवसायियों तथा शिक्षा संस्थाओं व पुस्तकालयों के लिए प्रकाशन विभाग की अनुपम भेंट।

पृष्ठ संख्या : 712 तथा 3 अन्य मानचित्र
मूल्य : रु० 25.00 (डाक खर्च मुफ्त)

शीघ्र आदेश भेजें :

व्यापार व्यवस्थापक,
विक्रय केन्द्र
प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, नई दिल्ली–110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली–110001
- 8, एस्पलेनेड ईस्ट, कलकत्ता–700069
- कामर्स हाउस (दूसरी मंजिल), करीमभाई रोड, बैलर्ड पीयर, बम्बई–400038
- एल० ए० आडिटोरियम, 736 अन्ना सलाइ, मद्रास–600002
- बिहार स्टेट को-आपरेटिव बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना–800004
- प्रेस रोड, त्रिवेन्द्रम–695001
- 10-बी, स्टेशन रोड, लखनऊ-225001

सम्पादकीय......[आवरण पृष्ठ 2 का शेषांश]

क्रियान्वयन की प्रक्रिया से ग्रामीण स्तर के लोगों को सम्बद्ध नहीं किया जाता और जिन लोगों के लिए ये कार्यक्रम बने हैं उनके गुण-दोषों पर विचार व्यक्त करने का उन्हें अवसर नहीं दिया जाता तब तक इन कार्यक्रमों के लिए नियत धन अवांछित लोगों की जेबों में जाता रहेगा और बढ़ती गरीबी और बढ़ती अमीरी की समस्या बनी रहेगी।

जहां तक राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम का सम्बन्ध है, इसके क्रियान्वयन का दायित्व भी अब समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन हेतु गठित की गई जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों को ही सौंपा जा रहा है और संचालन समितियों को भंग कर दिया गया है जो इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन के लिए गठित की गई थीं। यह एक सही कदम है और इससे क्रियान्वयन पर होने वाले व्यय में कमी आएगी। यह खुशी की बात है कि केन्द्र की ओर से राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों को चालू वित्त वर्ष के दौरान उपर्युक्त कार्यक्रम को लागू करने के लिए 90.30 करोड़ रुपये की राशि मुहैया की गई है।

गांवों से बेरोजगारी दूर करने की दिशा में 'ट्राइसेम' कार्यक्रम की भूमिका को भी नजरन्दाज नहीं किया जा सकता। यह कार्यक्रम स्वरोजगार के लिए ग्रामीण युवकों के प्रशिक्षण के निमित्त चालू किया गया है। जरूरत इस बात की है कि इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रशिक्षण के लिए अधिकतर गरीबी की रेखा से नीचे के युवकों को ही चुना जाए और उन्हें स्व-रोजगार चलाने के लिए समुचित धन उपलब्ध किया जाए। इससे ग्रामीण युवकों को रोजगार की तलाश में शहरों की ओर न भागना पड़ेगा। दूसरी बात यह है कि इस कार्यक्रम को भी जनसामान्य का कार्यक्रम बनाया जाए तथा इसमें गांवों के प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षण देने के लिए गांवों के दक्ष कारीगरों को भी शामिल किया जाय। □

RN 708/57
P & T Regd. No. D (DN) 98
Licenced under U (D)-55 to
post without pre-payment at Civil Lines Post Office, Delhi

सरकार ग्रामीणों के स्वास्थ्य की ओर विशेष ध्यान दे रही है । चित्र में डाक्टर ग्रामीणों को देखभाल कर रहा है और उन्हें दवा-दारू दे रहा है ।

गुजरात में डांग जिले के आदिवासियों द्वारा दूध का उत्पादन

ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सांस्कृतिक कार्यक्रम

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा
प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित